



## प्रस्तावना

सामाजिक भी और मे दत्त गान-गवय नये बान्नाबानी भी मदीनयम  
दरियो मे टनी हुई अनेक प्रवाग की कर्तानिया प्रमथुन कर रहा है । उनी  
नव हमारे बान्नाबानी के पढ़ते संघे मे समाज के शिवागे पर कठोर  
आलोचना करने समाज-संस्कारवा दणा अवसरक बायें शिवा जिन्मे  
उद्देश-प्रधान दणा भाषा-सीरी का एक समाज-संस्कारक दयम उी मठ प्रकार के  
पाठकीरी मधि तथा संस्कारकी रूप करनेके लिये पर्याप्त समझ आना रहा ।

इसी बीच विश्वविद्यालयोमे तथा हिन्दी साहित्य सम्मेलनकी परीक्षाओ  
मे हिन्दी का पर्याप्त प्रवेश हो जाने पर हिन्दी का व्यवसायिक-साहित्य  
पाठक अपनी अविश्वसनीय पठानि तथा सहायकी लेखक आदि म्नाए होरे  
गया । भाषाओकी लिखाणी पकाकर 'हिन्दी' को 'हिन्दुस्तानी' बनानेका  
उी सङ्कर्षितक प्रयत्न प्रारम्भ हुआ जसमे हिन्दीके एक व्यवस्थित स्वरूप  
का एक सम्मेलनके द्वारा संस्कारकीका मठक दयला कसेक और मठेक  
हो दया कि सहायकी की रूपमे भाषा-संस्कारक अवसरक करने हुए अनेक  
संस्कारक लिखने लेखकोके उद्देश-प्रधानकी (लिखककक कविताके म्नाए  
तथा संस्कारक करनेकी द्वारा संस्कारके लेखकी म्नायी और अनेक संस्कारो  
के संस्कारकक संस्कर्षितक संस्कर्षितक संस्कर्षितक संस्कारकी म्नायककी  
संस्कारकी संस्कारकी अविश्वसनीयकी संस्कारकी संस्कारकी म्नाय  
संस्कारकी संस्कारकी संस्कर्षितक म्नाय संस्कर्षितक संस्कारकी म्नाये कही  
जाने लगी । हे संस्कारकी ही संस्कर्षितक संस्कर्षितक संस्कारकी  
संस्कारकी संस्कर्षितक संस्कारकी संस्कारकी संस्कारकी संस्कारकी









पूर्व समंतात्पूर्व, विषयपूर्व तथा नाटकिक अंगि सभी अंतियों से मिली गई और समस्त मनानका कोई ऐसा विषय नहीं रहा जिसमें कहानियों ने स्वयं न किया हो

इस युगमें कहानी और निवेदन दो अत्यन्त प्रबल भाव-रसधाराके साथ-साथ जाने जाने हे और इसीलिये सत्कारके मन्त्री देसों में इन दोनों साधनोंका प्रयोग लोक-शिक्षाके लक्ष्य और व्यापार-साधनोंके विज्ञापन तक में हो रहा है। इसलिये इनका उचित परिमाणमें अत्यन्त अवशिष्ट तथा अनिश्चित है।

मुझे यह उल्लेख करते हुए अत्यन्त हर्ष होता है कि श्री अमिनेशचन्द्र उपाध्याय एम० ए०, बी० टी० ने अत्यन्त अध्ययन तथा परिश्रमसे पहले पहल व्यक्तिकी प्रधानता न देकर कलाकृतिकी शरीरता देकर इस गल्प-सूत्रके लिये कहानियोंका समग्र अत्यन्त विवेकपूर्ण मौलिकवाद के साथ किया है। मुझे विश्वास है कि छात्र इनका आनन्द लेंगे और द्वितीय मगार इनका आदर करेगा।

काशी,

ज्येष्ठशुक्ल १मी, २००८

(२९ ५.५१)

सीताराम धगुर्बंदी









उपन्यास और कहानी जीवन की एक झलक मात्र हैं। उपन्यास में हम जितने विस्तार के साथ बड़ने हैं कहानी में नहीं जा सकते। इसलिए अच्छी कहानी के लिए घटनाओं की शृंखला बहुत लंबी न होनी चाहिए। समय का भी ध्यान आवश्यक है। कहानी के लिए घटित होने वाला समय बहुत लंबा न होना चाहिए। समय की लंबाई कहानी में सिधिलता ला देती है। कम समय और कम घटनायें कहानीकार को कहानी के सर्वांगीण मोन्दर्य के बढ़ाने का अवसर प्रदान करती हैं।

जितने समय की घटनाओं का वर्णन कहानी में लाया जाय—इसके लिए कोई नियम नहीं हो सकता परन्तु इसका ध्यान रखना आवश्यक है कि केवल मुख्य मुख्य घटनाओं का ही वर्णन किया जाय।

कहानी का हृदयधाही होना ही उसकी सफलता है। जिस ध्येय और भावना में जिस स्थल पर लेखक ने जो कुछ लिखा है यदि उसी रूप में पाठक ने उन्हें ग्रहण न कर पाया तो कहानी सफल नहीं मानी जा सकती। यह तभी समभव है जब प्रत्येक घटना और पात्र का चित्रण स्वाभाविक हुआ हो। लेखक जब तक अपने को कहानी में वर्णित प्रत्येक परिस्थिति और पात्र के रूप में रखने में समर्थ नहीं है तब तक उसकी लिखी हुई कहानी आकर्षक नहीं हो सकती।

कहानी का कथानक (Plot) पहिले से निर्दिष्ट होना चाहिए। कुछ लेखक बिना पूरा कथानक समझ रखे ही लिखना प्रारम्भ कर देने हैं। परिणाम यह हाता है कि वे अंधरे में टटालने हुए चलने हैं और बहुधा मार्ग भ्रष्ट हो जाते हैं।

कहानी में पात्र भी जितने ही कम हों वह उतनी ही अच्छी होगी। अधिक पात्रों का समावेश उपन्यास में हो सकता है। उसे लेखक अपनी सुविधानुसार उपन्यास की समाप्ति के पूर्व ही जहाँ चाहें छोड़ सकता है।



अनि आवश्यकता है। यदि कहानी लेखक ने अपना मस्तिष्क विकसित कर लिया है तो मार्ग चलने भी वह अनेक कथानक प्राप्त कर सकता है। यह डाँचा मिलने के पश्चात् ही कहानीकार का कार्य प्रारम्भ होता है। वह अपने परिश्रम और कोशिश के द्वारा उसे एक मौलिक इच्छा में ढालकर आकर्षक बना देता है। कहानी लेखक को अपनी स्मरण-शुक्ति का सम्मिलन समय पर उठे हुए कहानी के योग्य विचारों को अंकित करने रहना चाहिए। उसे अपने कालावस्था का भी अच्छा अध्ययन करने रहना सम्भव होता है। देखते हम सभी लोग हैं। परन्तु यदि एक घट टूटने के पश्चात् कोई हमसे पूछे कि मार्ग में हमने क्या क्या देखा और क्या बिगाड़ बात पाई तो सम्भव है चार-पाँच-पाँच बातों को छोड़कर हम अधिक न बोल पायें। कहानी लेखक को संवेद सजग और संवेद रहने की आवश्यकता है।

कहानी की सफलता बहुत कुछ प्रारम्भ पर निर्भर है। "होवहार विरवात के शान चीकने पान" वाली कहावत यही भी बरिनायें होती है। अतः कहानी-कला की ओर भ्रमण वादों को कुछ ज्ञान का ध्यान रखना आवश्यक है। पहिली बात तो यह है कि कहानी का आरम्भ स्पष्ट और आकर्षक जाना चाहिए। कहानी के कुछ प्रारम्भिक वाक्यांशों में ही यदि हमारे मन का अपनी आत्मा नहीं खोज लिया तो उसका सफलता में संदेह है। उमर के मानव-जट पर पूरी कहानी अंकित रहती है और वह उसे किसी भी प्रकार आरम्भ कर सकता है। परन्तु उसका यह सम्भवता ही नहीं कि उसी के समान पाठक भी आरम्भ करने ही कहानी सम्भव। लेखक को अपने ही पाठक की स्थिति में समझ सम्झने की आवश्यकता है। सभी वह सम्भव वादना कि वह प्रारम्भ में ही आकर्षक बन बनाई जा सकती है। किसी अनिष्टि के शान पर उसका प्रसन्न करने के लिए, ऊपर न बचाने के लिए हम पर ही सुन्दर हम न सजग १ और सर्वत्र अधिक आकर्षक प्रदान द्वारा

Handwritten title or header at the top of the page.

Main body of handwritten text, consisting of approximately 20 lines of dense script.



कहानी में छोटी बात जो ध्यान देने की है वह पात्रों को कम रखना है। बहुत से लेखक अनेक पात्रों और अनेक स्थानों का नाम कहानी में भर देते हैं। परन्तु ऐसा कित्ती भी दसा में न होना चाहिए। पाठक धीरे-धीरे पात्रों और स्थानों से परिचित होता है और एक छोटी सी कहानी में बहुत अधिक पात्र ला देने में न तो सबका चित्रण ही सुन्दर किया जा सकता है न उसका समुचित विकास ही हो पाता है। पात्रों में नायक का भी प्रवेग यथासोघ्र होना चाहिए। अधिक पात्र और स्थल के लोभी लेखक को कहानी की ओर न आकर उपन्यास की ओर झुकना चाहिये जिसमें तात्विक रूप में अधिक अन्तर न होकर थोड़ा ही परिवर्तन लाना आवश्यक होता है।

कहानी में हम अपनी सुविधानुसार जो चाहे नहीं लिख सकते। अतः कहानी की एक निश्चित रूपरेखा पहले से बनी रहनी चाहिये। उसमें अनगल बातें कभी भी न लानी चाहिये। रसों के निर्वाह का भी ध्यान रखना आवश्यक है। यदि हास्यरस की कहानी है तो करुणापूर्ण वर्णन न लाना ही उत्तम है।

चतुर लेखक पात्रों के कर्पोपकरण द्वारा ही अपना उद्देश्य पूरा करता है। वह स्वयं कुछ नहीं कहता। कर्पोपकरण जितना ही नाटकीय ढंग से प्रस्तुत किया जा सके कहानी उतनी ही आकर्षक होगी।

कहानी का प्रारंभ कित्ती घटना से हो तो यह अधिक आकर्षक हो सकती है। यकायक कोई घडाका हुआ और चारों ओर में लोग जमा हो गये। जांचा, पंछा और समाधान होने पर लौट गये। ठीक ऐसी ही घटना में प्रारंभ होने वाली कहानी पाठकों को खींच लेगी और उनकी जिज्ञासा के बल पर उन्हें अपने में व्यस्त रखती है।

इन सब बातों को ध्यान में रखकर कहानी लेखक को आगे बड़ना चाहिए। परन्तु कुछ न्यायात्मिक बातें भी होनी हैं जो लेखक को सहायता देने वाली होती हैं। इनको अपनी लेखन और प्रबन्धन ध्यान बड़ने में प्रशिक्षण के द्वारा

पर भी कहानी को अच्छा बना सकती हैं। इतना अवश्य ध्यान रखना होगा कि कहानी केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं है। उसने पाठक को कुछ सीख भी देनी है। परन्तु यदि हमने कहानी में ही शिक्षा देना प्रारम्भ कर दिया तो यह पाठक को उबाने वाली हो जायगी। अतः इस ध्येय की पूर्ति अद्रव्य और चतुर्यपूर्ण ढंग से ही होनी चाहिये।

अन्य भी कहानी का ऐसा हो जिसे पढ़कर पाठक के मन में एक अनुभूति बनी रहे और वह अधिक कहानी पढ़ने का इच्छुक बनता जाय।

कहानी कहने के ढंग के दृष्टिकोण से देखें तो इसे दो रूपों में रखा जा सकता है। एक तो प्रथम पुरुष में और दूसरे अन्य पुरुष में। पहिले प्रकार की कहानी में उन्हीं के बीच का कोई पात्र आप बीबी मूनाता चलता है। प० नीता-गम जी चतुर्वेदी की कहानी "मैं कस जा रहा हूँ" इसी श्रेणी की है। दूसरे प्रकार की कहानियों में श्रेय एक तटस्थ व्यक्ति के समान दूसरों पर घटने वाली घटनायें देता चलता है। दोनों ही ढंग सुन्दर हैं। चतुर लेखक जिस माध्यम को भी अपनायें कहानी के यथायें हुए नियमों को दृष्टिकोण में रखा जाये उसे सजीव और रोचक बना सकता है।

कहानियाँ कितने प्रकार की हो सकती हैं यह बतलाने के लिए पर्याप्त समय और स्थान की आवश्यकता है। हमारे सामाजिक तथा वैयक्तिक जीवन का उठाने के लिये जितनी बातें आवश्यक हैं उतने ही प्रकार की कहानियाँ भी हो सकती हैं। विभिन्न विभिन्न दृष्टिकोण रखने के कारण सभी कहानी लेखक विभिन्न मार्ग का अनुसरण करने हैं। कुछ आदर्शवादी हैं उनका विचार है कि हमारे सामने एक ऊँचा आदर्श खाना चाहिये जिसे देखने हुये हम उसी प्रेरणा के लिये आगे बढ़ें व प्रयत्नशील हो सकें। श्री बुन्दावनलाल वर्मा की कहानी इसी प्रकार की है। आदर्शवादी ऐसा समझते हैं कि जब तक समाज का जितने भी दशा का उद्वेग-व्यथन उन्नीसतादिह इस में पाठक को समझने में सहायता करेगा और अंत में समाज को सुखी बनाएगा तब तक उन आदर्शों का









आना-था । किमी ने ककड़ फेंके, किमी ने तालियाँ बजाईं । तोता फिर उठा और वहाँ से दूर आम के बाग में एक पेड़ की फुनगी पर जा बैठा । महादेव फिर साली पित्रडा लिये मेकड़ की भाँति उचकता हुआ चला । बाग में पहुँचा तो पंर के तन्दुओं में आग निकल रही थी, मिर चक्कर खा रहा था । जब जरा सावधान हुआ तो फिर पित्रडा उठाकर कहने लगा—  
 “सत्त गुददत्त निवदत्त दाता ।” तोता फुनगी में उतर कर नीचे एक डाल पर बैठ गया, किन्तु महादेव की ओर मसक नैयों में ताकता रहा । महादेव पित्रडा छोड़कर एक पेड़ की आड़ में हो रहा । तोने ने चारों ओर देखा और फिर आकर पित्रडे के ऊपर आसन लिया । महादेव का हृदय उछलने लगा । यह धीरे धीरे पित्रडे के समीप आया और लपका कि तोने को पकड़ जे, किन्तु तोता हाथ न आया, फिर पेड़ पर जा बैठा ।

साँक तक यही हाल रहा । तोता कभी इधर, कभी उधर उठना, कभी अपने पीने की प्याली तो कभी भोजन को देखना और उड़ जाता । बूढ़ा अगर मूर्तिमान मोह था, तो तोता मूर्तिमयी भाया । शाम हो गई और भाया मोह का सग्राम अन्यकार में विलीन हो गया ।

### [ ३ ]

शाम हो गई । चारों ओर निविड अन्यकार छा गया । तोता न जाने कनो में कहाँ छिपा बैठा था । महादेव जानना था कि रात में तोता कहीं उठकर नहीं जा सकता और न पित्रडे में ही आ सकता है, जिस पर भी यह उस जगह ने टिकने का नाम न लेता था । आज उसने दिन भर कुछ नहीं खाया, रात के भोजन का भी समय निकल गया । पानी तक उगने न हुआ था । परन्तु आज न तो उसे भुन थी और न प्यास । तोते के बिना उसे ज्वना जीवन निम्मात्र अण्ड और मृना ज्ञान पहता था । बहु दिन-रात काम करता था । उमरिय कि यत्र उमर्या अन्न प्रग्णा थी । बहु जीवन के



उसे फिर मन्देह हुआ कि कहीं फिर चोर लोट न आवें और अकेला पाकर मुझसे मोहरें छीन लें। उसने कुछ मोहरें कमर में बांध ली और फिर एक मुली लकड़ी ने जमीन की मिट्टी हटाकर कई गड्डे बनाये और उमें मोहरों से भरकर मिट्टी ने ढक दिया।

[ ८ ]

महादेव के अन्त-नेत्रों के सामने अब एक दूसरा ही जगन् था। चिन्ताओं और कल्पनाओं से परिपूर्ण। यद्यपि अभी इस कोय के हाथ में निकल जाने का नय था मगर अभिलाषाओं ने अपना काम आरम्भ कर दिया था। एक पक्का मकान बन गया, सराफे की एक बढ़िया दुकान खुल गई और निम्न मन्त्रियों से फिर नाता जुड़ गया। जब विलास की सामग्रियाँ एकत्रित हो गईं तो तीर्थ-यात्रा पर चले और लौटकर बड़े समारोह से यज्ञ और ब्रह्म भाव हुआ। इसके पश्चात् एक निवालय और एक कुँआ बन गया, उद्यान और उसमें कथा पुरान का आयोजन भी हो गया। साधु-सत्कार भी होने लगा।

अकस्मात् उसे ध्यान आया, वही धार आ जिय तो मैं भागुंण कंने ? उसने परीक्षा करने के लिए कलमा उठाया और दो सी पग तक वेतहासा भासा बला गया। जान पड़ता था उसके पीरो में पर लग गये हैं। चिन्ता गान्त हो गई। इन्हीं कल्पनाओं में रात स्पतीन हो गई। उषा का आगमन हुआ, हवा जामी, चिटियाँ गाने लगीं। सहसा महादेव के कानों में आवाज आई—

मत्त गृहदत्त मिषदत्त दाता । गम क चरण में चित्त लाया ।”

यह शाल मर्देव महादेव की विज्ञा पर गहना था। दिव में सहस्रो ही बार प शब्द उसके मन्त्र से निकलते थे पर उनका वास्तविक भाव उसके अन्त-करण की स्थिति न बनता था। उस 'कम' शब्द से गम निकलता है, उसी प्रकार उसके उर में ११ 'म' शब्द गम निकलते हैं। 'मन्त्र' और 'प्रभाव' शब्द ।



न मूँह फेर लिया, यह अमगल्य मुनि कहीं ने आ पहुँची, मान्युम नहीं आज दिन भर दाना भी मयस्नर होगा या नहीं ! इष्ट होकर पूछा—“क्या है जी ? क्या कहते हो, जानते नहीं कि हम इस बेला पूजा पर रहते हैं ?”

महादेव ने कहा—“महाराज ! आज मेरे यहाँ सत्यनारायण की कथा है ।”

पुरुहित जी विस्मिन्न हो गये, कावों पर विश्वास न हुआ । महादेव के घर कथा होना उनकी असाधारण घटना थी, जितनी अपने घर में किसी भिखारी के लिये कुछ निवान्दता ।

पूछा—“आज क्या है ?”

महादेव बोला—“कुछ नहीं, ऐसी ही इच्छा हुई कि आज नगमन की कथा सुन लूँ ।”

प्रभात ही से तैयारी होने लगी । बंदों और अन्य निकटवर्ती गावों में मुषारी फिरी । कथा के उपरान्त भोज का भी न्योता था । जो मुनडा, आश्चर्य करता । यह आज रैन में दूब कैसे जमी ।

मध्या समय जब सब लोग जमा हो गये, पण्डित जी अपने सिंहासन पर विराजमान हुये, तो महादेव खड़ा होकर उच्च स्वर में बोला—“भाइयो, मेरी मारी उमर छल कपड में कट गई । मने न जाने कितने जादमियो को दगा दिया, कितने मने को मोटा किया, पर अब भगवान ने मुझपर दया की है, मेरे मूँह के कालिख को मिटा देना चाहते हैं । मैं सभी भाइयों से नम्रता-पूर्वक कहना है कि जिम्मा मेरे जिम्म जो कुछ आता हो, जिसकी जमा मने माग ली हो, जिम्मे कोमे माग का खाटा कर दिया हो, वह आकर अपनी एक एक बीड़ी चुका ले, अगर काट पत्ती न आ सका हो तो आप लोग उससे जाकर कहूँ दीजिये कत म एक माग तक जब जो पाठ आज लोग अपना हिस्सा चकता करे । गवाती मांगो का काट काम नरा । सब लोग सम्राटे में आ गय । काट मांगिक भाव म मिर टिग कर बोला—“हम कहने न



१. 'विद्यया च विद्यमानो विद्यते' इति शब्दोपनिषत्प्रमाणेन च  
 'विद्यते' इति शब्दोपनिषत्प्रमाणेन च

२. 'विद्यते' इति शब्दोपनिषत्प्रमाणेन च 'विद्यते' इति शब्दोपनिषत्प्रमाणेन च

३. 'विद्यते' इति शब्दोपनिषत्प्रमाणेन च 'विद्यते' इति शब्दोपनिषत्प्रमाणेन च

४. 'विद्यते' इति शब्दोपनिषत्प्रमाणेन च 'विद्यते' इति शब्दोपनिषत्प्रमाणेन च

५. 'विद्यते' इति शब्दोपनिषत्प्रमाणेन च 'विद्यते' इति शब्दोपनिषत्प्रमाणेन च

६. 'विद्यते' इति शब्दोपनिषत्प्रमाणेन च 'विद्यते' इति शब्दोपनिषत्प्रमाणेन च

७. 'विद्यते' इति शब्दोपनिषत्प्रमाणेन च 'विद्यते' इति शब्दोपनिषत्प्रमाणेन च

८. 'विद्यते' इति शब्दोपनिषत्प्रमाणेन च 'विद्यते' इति शब्दोपनिषत्प्रमाणेन च

९. 'विद्यते' इति शब्दोपनिषत्प्रमाणेन च 'विद्यते' इति शब्दोपनिषत्प्रमाणेन च

१०. 'विद्यते' इति शब्दोपनिषत्प्रमाणेन च 'विद्यते' इति शब्दोपनिषत्प्रमाणेन च

उसके पीछे तोर्ययात्रा करने चला जाऊंगा । आप सब भाइयों से मेरी बिनती है कि आप सब मेरा उद्धार करें ।”

एक माह तक महादेव लेनशाय की राह देखना रहा । रात में उसे चोरा का भय में नींद न आती । अब वह कोई काम न करता । शराब का बरतना भी छूटा । साधु अभ्यास जो द्वार पर जा जाते उनका श्यासोम्य सुत्कार करना । दूर दूर तक उसका सुषय फैल गया । यही तक कि महीना पूरा हो गया और एक जादवी भी अपना द्विवाद बुझाने न आया । अब महादेव का ज्ञान हुआ ममार में कितना सदस्यवहार है । अब उसे मान्य हुआ कि ममार बुरो के लिये बुरा है पर अच्छा के लिये अच्छा है ।

इस घटना की हूवे पश्चात् वर्ष बीत चुके हैं । आप बंदी जाइय ना दूर ही से सुनहला कलम दिखाई देता है । यह आमुज द्वार का कलस है । उनमें भिला हुआ एक पक्का तालाब है जिसमें मूय कमल फिद गहूते हैं । उसकी मछलियाँ कोई नहीं पकड़ता । तालाब के किनार एक विशाल मसांध है । यही आम्माराम का स्मृति चिन्ह है । उसके सुषय में विभिन्न द्वि वतियाँ प्रचलित ह । काई कहता है, उसकी स्तवदित्त पित्रता स्वयं क चला गया, काई कहता है कि वह सत्त मुग्दल कहन हूयें अनभ्यांन हो गया । पर दयाव यह है कि उस पथी रूपी चन्द्र का निर्मा बिन्ती रूपी राटू न सम लिया था । सोय गहूते हैं, आर्थी गल की अर्था तक तालाब के किनार आशान आने हैं—

“नन मुग्दल दिवदन जाना ।

राम के चरन में चिन लाग्या ।”

महादेव के विषय में भी कितनी ही रत्न श्रुतियाँ हैं । उनमें सबसे मान्य यह है कि आम्माराम के समाधिस्थ होने के बाद वह कई सन्ध्यासियों के साथ द्विवालय बंटे रये आर वहाँ से स्तोरघर न आय । उनका नाम आम्मा-राम प्रसिद्ध हो गया ।।

# NOTES

1. Introduction

The following notes are intended to provide a general overview of the subject matter discussed in the accompanying text. The primary objective is to clarify the key concepts and findings presented, ensuring that the reader has a solid understanding of the material. This document is structured to facilitate a logical flow of information, starting with the basic principles and moving towards more complex applications. The notes are organized into several sections, each focusing on a specific aspect of the overall topic. The first section covers the foundational concepts, while subsequent sections delve into more detailed analyses and practical implications. The final section summarizes the main points and offers concluding thoughts on the significance of the work. It is important to note that these notes are not meant to replace the original text but rather to complement it by providing additional context and highlighting the most relevant information. The language used throughout is clear and concise, aiming to make the complex subject matter accessible to a wider audience. The notes are based on a thorough review of the original document and are intended to serve as a valuable resource for anyone interested in the field. The following sections will explore the various facets of the topic in greater detail, providing a comprehensive overview of the current state of knowledge and the challenges that remain to be addressed. The notes are designed to be a helpful guide, offering insights and perspectives that may not be fully apparent from the original text alone. The goal is to provide a clear and concise summary of the key points, ensuring that the reader can quickly grasp the essential information. The notes are organized into several sections, each focusing on a specific aspect of the overall topic. The first section covers the foundational concepts, while subsequent sections delve into more detailed analyses and practical implications. The final section summarizes the main points and offers concluding thoughts on the significance of the work. It is important to note that these notes are not meant to replace the original text but rather to complement it by providing additional context and highlighting the most relevant information. The language used throughout is clear and concise, aiming to make the complex subject matter accessible to a wider audience. The notes are based on a thorough review of the original document and are intended to serve as a valuable resource for anyone interested in the field. The following sections will explore the various facets of the topic in greater detail, providing a comprehensive overview of the current state of knowledge and the challenges that remain to be addressed. The notes are designed to be a helpful guide, offering insights and perspectives that may not be fully apparent from the original text alone. The goal is to provide a clear and concise summary of the key points, ensuring that the reader can quickly grasp the essential information.







अन्ना में पैसे नहीं जाते हैं बाबू ! ..... हाँ फिर जाओ । अबकी अन्ना  
 निकल जायगी..... तुम्हारी है ? ओ क्या हुआ वे तुम्हें पैसे क्यों दिये ?  
 ठीक ही क्या न लिखा है ? ..... निकल दिये पैसे ! पैसे नहीं दोगे अबकी  
 परकीय बतवाई । अन्ना अब को पिनो को नहीं लेना है ? सब से बुरे ?  
 तुम्हारे माँ के राज दिये नहीं है ? अन्ना तुम को यह को । ..... अन्ना  
 तो अब मैं अपना है ।  
 हाँ पत्ता तुम्हारेकाल दिन आते बड़ गया ।

[३]

राज करने नकल में बड़े तुम्हें रोहिणी तुम्हारेकाल को मारी बाँचे  
 तुम्हारे नहीं । अब मैं अपने अनुभव दिये कि बच्चों के साथ अपने प्यार  
 में बाँचे करने सारा छोटे बाबा रोहिणी नहीं नहीं अन्ना—छिर यह मोटा भी  
 क्या मन्ना बेबन है बाँचे अन्ना भी क्या मन्ना अब नकल है ? पन्ना  
 तो सब है जो बेबन हाँ कह मारा नाग लिखा है । रोहिणी करने  
 में रोहिणी ।

रोहिणी पन्ना तुम्हारेकाल हाँ अन्ना फिर लिख तो तुम्हारे रोहिणी में  
 तुम्हारे नकल—बच्चों को तुम्हारेकाल, तुम्हारेकाल !  
 रोहिणी हाँ तुम्हारे करने रोहिणी नकल ही नकल—अन्ना क्या मन्ना है  
 अन्ना ? बच्चों लिखें नकल रोहिणी को तुम्हारेकाल वा यह मोटा फिर और  
 मन्ना बच्चों के अन्ना रोहिणी नकल मन्ना अन्ना नहीं । नकल के नकल  
 अन्ना और बच्चों रोहिणी तुम्हारेकाल न अन्ना । फिर और और मन्ना  
 मन्ना भी अन्ना मन्ना नहीं ।

४१

न नकल बन्द—

मन्ना के लिखें ..... अन्ना मन्ना मन्ना अन्ना मन्ना को मन्ना मन्ना

बढ़कर आजानुबिलम्बित केज-राशि मूला रही थी। इसी समय सीधे ही गली में मुनाई पड़ा—“बन्धा को बहूजानेवाला, मिठाई वाला।”

मिठाईवाले का स्वर परिचित था, भ्रष्ट से रोहिणो सीधे उतर आया। इस समय उसके पनि मकान में था। हाँ उगड़ी वृद्धा दादी थी। रोहिणो उनके निकट आकर बोली—“दादी चुपू मुपू के लिये मिठाई लेनी है। जरा कमरे में चलकर ठहराओ तो। मैं उधर कैंपे जाऊँ, काँई आना नहीं। जरा हटकर मैं भी चिक की आठ में बँटी रहूंगी।

दादी उठकर कमरे में आकर बोली—“ए मिठाई वाले ! इधर आना। मिठाईवाला निकट आगया। बोला—“माँ, कितनी मिठाई दूँ ? नई उरु की मिठाईयाँ हैं, रंग बिरंगी, कुछ कुछ लट्टी, कुछ कुछ मोड़ी और जायके-दार। बड़ी देर तक मुँह में टिकती हैं। जल्दी नहीं धुलती। बन्धे बंधे पाव से खाते हैं। इन गुणों के सिवा ये खाँसी को भी दूर करती हैं। हाँ कितनी दूँ ? चपटी, गोल और पहलदार गोलियाँ हैं। पैसे की सोलह देता हूँ।”

दादी बोली—“सोलह तो बहुत कम होती है। भला पन्नीस तो देते।”

मिठाईवाला—“नही दादी अधिक नहीं दे सकता। इतनी भी कैसे देता हूँ यह अब मैं आपको क्या । खैर, मैं अधिक तो न दे सकूँगा।”

रोहिणो दादी के पास ही बँटी थी। बोली—“दादी, फिर भी काफ़ी खस्ती दे रहा है। चार पैसे की ले लो। ये पैसे रहे।”

मिठाईवाला मिठाईयाँ गिनते लगा।

“नौ चार पैसे की द दो। पन्नीस न सही बीस ही दो। अरे हाँ ! मैं बूढ़ी हूँ, सोल पाव तो अब मुझ ज्यादा करना भी नहीं आता।” कहते हुए दादी के पास ल मुह की जगती मुस्कानट भी फट निकली।



उनकी अट्मोजियो मे घर में कोठाहूक मना रहता था । समय की गति—  
विधाना की लीला । अब कोई नहीं है । दादी, प्राण निराशे नहीं निकते ।  
इमीलिये उन्ही बच्चो की सोज में निरला हूँ । वे मय अन्न में होमे तो यहीं  
वही । आनिर कहीं न कहीं तो जम्मे ही होमे । उम तरह रहना तो पुत्र  
घुलकर मरना । इम तरह मुग-कनोप के माय मरुंगा । इम तरह के  
जीवन में कभी-कभी अपने उन बच्चो की एक भलक नी मिठ आगी है  
ऐसा जान पड़ता है, जैसे वे इन्ही में उछल कूदकर हंस खेद रहे हैं । पैने की  
कमी थोडे ही है । आपकी दया मे पैने तो काफी ह । जो नहीं है, इग तरह उमी  
को पा जाना हूँ ।

रोहिणी ने अब मिठाईवाले की ओर देखा । देखा—उमकी आंसे  
आँसुओं से तर हैं ।

इसी समय चुन्नु मुन्नु आ गये । रोहिणी ने लिपटकर उमका अचल परह-  
कर बोले—“अम्मा मिठाई ।”

“मुम्मे लो” —कह कर तत्काल कागज की दो पुटियो में मिठाइयों  
भरकर मिठाईवाले ने चुन्नु मुन्नु को दे दी ।

रोहिणी ने भीतर मे पैसे फेंक दिये ।

मिठाई चाँते ने पेट्टी उठाई और कहा— ‘अब इम बार ये पैमे न लूँगा ।’

दादी बोली—अरे-अरे, न-न, अपने पैमे लिये जा माई ।”

किन्तु तब तक आगे सुनाई पड़ा, उमी प्रकार मादक मुदुल स्वर में—  
“बच्चो को बरलानेकाला मिठाईवान्ना ।”



सेठ छगामल कुछ अप्रसन्न हो कर बोले—“मेरी दशा इन आशीर्षों से कभी नहीं सुधर सकती। मेरे आशाषे और विश्वास मुझे मौत के पत्र से नहीं छुड़ा सकते।”

मुनीम जी कुछ कहने को थे, परन्तु सेठ ने उन्हें हाथ के इशारे से रोक कर कहा—“मुनीम जी, आप मुझे बहलाने का चोप्टा मन कीजिये। अब लोकाचार का समय नहीं रहा। मैंने आपको जिन काम के लिये बुलाया है उसे मुनिये और समझिये।”

मुनीम जी—“मुझे जो आजा हो वह मैं सदैव करने के लिए—”

सेठ जी—“इसके कहने की कोई आवश्यकता नहीं। आगहो मेरे यहाँ रहते हुए २० वर्ष हो गये हैं। इतने दिनों में मुझे आपके विषय में पूरी जानकारी हासिल हो चुकी है। मुझे जिनना विश्वास आप पर है, उतना धुत्री पर भी नहीं।”

मुनीम जी—“यह सब आपकी कृपा—”

सेठ जी—“कृपा नहीं, सम्झी बात है। अच्छा जरा चुट्टू की चुट्टू-बादये।”

मुनीमजी उठकर बाहर गये और १० मिनट बाद लौटे। उनके साथ एक नवयुवक था, जिसकी आयु पच्चीस छब्बीस वर्ष के लगभग थी। मुनीम जी तथा नवयुवक दोनों सेठ जी के पर्दे के पास बैठ गये।

सेठ जी कुछ देर आँसु बंद किये पडे रहे। तत्पश्चात् आँसें सोंक कर बोले—‘बेटा चुट्टू।’

नवयुवक—‘जी। पिता जी।’

सेठ जी—‘मैं तो अब दो ही चार दिन का मेहमान हूँ।’

मुनीम जी—‘आप ना कया बात किया करन ह। आप अवश्य अच्छे ही जायग। कय गकरिण माइव करन ह कि अभी नाई बात नही

दिखाई। आप भी ही ऐसी बातें सोच सोच कर तबियत परेशान किया करते हैं।”

बुद्धू—“यह आप क्या—”

मेठ जी हाथ के इंगारे से पुत्र को रोक कर बोले—“पहिले मेरी सब बातें सुन लो, फिर जो जो चाहे कह लेना। हाँ, तो यदि मैं चल ही बसा तो अपने पीछे तुम्हारे लिए अपने स्थान पर मुनीम जी को छोड़ता हूँ।”

बुद्धू ने कुछ खीर कर मुनीम जी की ओर देखा। मुनीम जी भी कुछ पबरा से गये।

मेठ जी—“जो वेतन इन्हें अब दिया जाता है, वह नदेव दिये जाता—चाहे वे जान करें या न करें। जब कोई बड़ा जान करना जो तुम्हारा समान्य हुआ न हो तो पहिले मुनीमजी से सलाह ले लेना और जैना यह कहें देना ही करना।”

बुद्धू ने जैसे फाड़ पाड़ कर मुनीम जी की ओर देखा जाने प और पिता जी की बातें सुन रहे थे। मुनीम जी बुखार निर मुकामे बैठे थे।

मेठ जी कुछ देर दम लेकर बोले—“बन तुम्हारे लिए मेरी यह अंतिम आज्ञा है। मुझे और किसी सम्बन्ध में कुछ नहीं कहना है। तुम स्वयं समझदार हो; जो उचित समझना करना।”

मेठ जी ने फिर कुछ देर दम लिया। तत्परचात् बोले—“मुनीम जी! आपने मुझे कुछ नहीं कहा। मुझे दिखाना है कि जो व्यवहार आप मेरे नाम करते रहे इनके साथ भी करेंगे। कारण, आप इने सर्व्व ही पुत्रवत् समझते रहे हैं।”

मुनीम जी ने मेठ जी की बात का कोई उत्तर न दिया। मेठजी ने मुनीमजी की ओर देखा। बुद्धू मुनीम की आँसुओं में आँसुओं की छोटी छोटी बूँदें निकल कर उनके भ्रूजों को दू गालों पर बह रही थी। जान पड़ता है मेठजी का उन बूँदों का ज्ञान अपने बचपन का उत्तर मिल











लोगों ने चूम्बू को भी बहुत समझाया बुझाया कि तुम अपने दुर्घ्नबहूत के लिए मुनीम जी से क्षमा माँगो और उन्हें मना-मुनू कर राजी करो। परन्तु समझाने वालों की अपेक्षा भडकाने वाले अधिक थे। अतएव चूम्बूल ने इस बात पर कुछ ध्यान न दिया। उन्होंने केवल इतना किया कि मुनीम जी को पैसा के तौर पर कुछ मासिक देना चाहा परन्तु मुनीम जी न एक पैसा तक लेना स्वीकार न किया। उन्होंने कह दिया—“मैं कभी चूम्बूल का नौकर नहीं रहा। जिसका नौकर था उसका था। मैं चूम्बूल का पैसा भी नहीं ले सकता।”

इस प्रकार चूम्बूल पर जो खीसा बहुत अकुश या बहू भी डूर हो गया। स्वभाव होने से विद्यामप्रिय चूम्बू के लचं बड़ गये। उन्होंने अपने कारोबार पर भी उचित ध्यान देना छोड़ दिया। सब काम प्रायः नीकरों ही के बरोमे पर होने लगा। मात-डेड़ मात इसी प्रकार काम चला। उनके कारबार की इमारत बहुत बड़ी थी और नीच कमजोर हो गई थी। समय के बच में उलट-कर करके स्थिति का रंग बदल दिया। चूम्बूल की लापरवाही वल्ल में बहू दिन लेही आई त्रिमसे संड टगामल का फर्म डगमगाने लगा। दो लाख की एक हुन्डी का भुगतान था। चूम्बूल को उसका स्मरण ही न था और न उनके नीकरों और मुनीमों ने ही उस पर कुछ ध्यान दिया। त्रिम समय आदमी हुन्डी लेकर दुकान पर आया और भुगतान माँगी उस समय चूम्बूल की अर्भिं लुडी। उस समय उनके पाम केवल पचास हजार रुपये नैपार थे। इससे मन्देह नहीं कि यदि उन्हें पहिले भुगतान का ध्यान होता तो दो लाख बरा बार-छ लाख का भुगतान भी दिया जा सकता था। परन्तु दो बार दिन पहिले बरा चूम्बूल को एक घटा पहिले लच्छ भी उसका ध्यान न आया। अब यदि भुगतान नुग्न नहीं दिया जाता तो फर्म दिया-दिया हुन्डा जाता है। उस एक मदी बात थी त्रिमसे चूम्बूल जैसे लापरवाह का भी कडका पैसा पया। उसके रूप पैर पर सब अर्भिं लच्छ अर्भिं





मटरूमल बोले—“भई, जरा उंगलियाँ मीची कर लूँ तो देखूँ। जाके के मारे उंगलियाँ मीची ही नहीं होती।”

कुछ देर बाद दहकती हुई अंगोठी मटरूमल के सामने आई। मटरूमल कुछ देर तक उसमें हाथ सँकने के बाद बोले—“हाँ! भई अब लाजो हुण्डी देखूँ। बुझाये में चरीर की दुईसा हो जाती है। मेरे तो हाथ भी अब कापने लगे।”

यह कह कर उन्होंने हुण्डी हाथ में ले ली। उस आँखो के सामने लाये, हाथो के ठीक नीचे अंगोठी थी। अकरमान् हाथ धर्राये, और हुण्डी हाथ में छूट अंगोठी में जा गिरी। जब तक लोगो का ध्यान उगड़ी ओर जाय-जाय तब तक वह जल कर राख हो गई।

भुगतान मारने वाले के चेहरे का रंग उड़ गया। इधर नुसूमल का चेहरा मारे प्रसन्नता के खिल उठा।

मटरूमल किसी कं बोलने के पहिले ही बोल उठे—“क्या कहूँ, हाथ ऐसे कापे कि हुण्डी संभली ही नहीं। खैर, कोई चिन्ता नहीं। (भुगतान लेने वाले से) तुम हुण्डी की नकल लाओ और भुगतान ले जाओ। अभी ले आओ, अभी भुगतान मिल जाय।”

भुगतान लेने वाला जल-भुन कर बोला—“नकल क्या मेर पाय परी है।। जब मंगाई जायमी तब आयमी। नकल मँगाने में तीन चार दिन लग जायेंगे।”

मटरूमल—“तो भाई में इसे क्या करूँ। समय की बात है, हाथ काप गया। बुझा आइमी ठहरा। परन्तु इसने क्या, तुम्हारा भुगतान तो रह ही न जायगा।”

भुगतान लेने वाला बोला—“भुगतान भला क्या रहेगा, पर तीन चार दिन का भमेला तो लग गया।”

मटरूमल—“अब तो क्या हो गया, क्या किया जाय ?”







“हाँ सरकार।” रज्जब ने उत्तर दिया।

ठाकुर बोला—“तब भीतर आ जाओ, और तमासू अपनी बिलम से पी लो। अपनी औरत को भी भीतर कर लो। हमारी पीर के कोने न पड़े रहना।”

जब वे दोनों भीतर आ गये, ठाकुर ने पूछा—“तुम कब यहाँ से उठ कर जाओगे?” जवाब मिला—“अंधेरे में ही महाराज। खाने के लिए रोटियाँ बाँधे हैं, इसलिए पकाने की जरूरत न पड़ेगी।”

“तुम्हारा नाम?”

“रज्जब?”

[ २ ]

थोड़ी देर बाद ठाकुर न रज्जब से पूछा—“कहाँ से आ रहे हो? रज्जब ने खान का नाम बोललाया।

“वहाँ किसलिए गये थे?”

“अपने रोजगार के लिए।”

“काम तो तुम्हारा बहुत बुरा है।”

“क्या कहीं पेट के लिए करना पड़ता है। परमात्मा ने जिमके लिए जो रोजगार मुकरंज किया है, वही उसको करना पड़ता है।”

क्या नफा हुआ।” इस काने में जग ठाकुर का मँकोच हुआ और इस का उत्तर देन रज्जब का उमम बह कर।

रज्जब न जवाब दिया— महाराज पर के लायक कुछ मिला गया है, ॥ २ ॥ ठाकुर ने उस पर काट कर देना कहा।

रज्जब एक रात बाद रज्जब — का मँकोच दे कर चला जाईमा।  
जि तक रज्जब का मँकोच दे कर ही मंगला।



इसके बाद दिन भर के धरे हुए परिष्कृत नौ गये। रात्री रात्र गये हुए लोगों ने एक बड़े इलाके में टाकुर हो जाकर बसाया। एक पटी गी प्यार छोड़े टाकुर बाहर निकल गया।

आपणुदो में न एक न धीर में रहा—'दाऊ व' भाव तो सादी रूप लीं है।' कल मन्दा का सुगुन बंटा है।

टाकुर में रहा—'भाव जम्हरा पी। मंत्र, कल देता जायगा। क्या राई उजाय किया जा।'

हाँ—'आपणुदो बोला, एक कमाई रुपये की नोट बांधे इली और जाया है। परन्तु इन लोग जरा देर में पहुँचे। यह तिखक गया। कल देखने जरा जल्दी।'

टाकुर ने घुमा-सूधक स्वर में कहा—'कमाई का पैसा न छुनेगे।'  
'क्यों?'

'सूरी कमाई है।'

'उत्तरे रुपये पर कमाई थोड़े ही मिलता है।'

रुपया तो दुमरो का ही है कमाई के हाथ में जाने से रुपया कमाई नहीं हुआ।'

'मेरा मन नहीं मानता यह असुद्ध है।'

हम अपने लक्ष्य पर न उत्तरी शब्द कर लगे।

ज्यादा बहाने नही हुए। अकल न साचकर अपने माधियों को बाहर-का बाहर हो गये।

जाने इलाके में... अकल न साचकर अपने माधियों को बाहर-का बाहर हो गये।

तो हलका हो गया था, परन्तु शरीर-भर में पीडा थी और वह एक कदम भी नहीं चल सकती थी।

ठाकुर उसे वही ठहरा हुआ देख कर कुपित हो गया। रज्जब उस बोला—“मेने खूब मोहमान इकट्ठा किए हैं। गाँव भर सोधी देर में तुम लोगो को मेरो पौर में टिका हुआ देख कर तरह तरह की बर्बात करेगा। तुम बाहर जाओ और इसी समय।”

रज्जब ने बहुत वितनी की, किन्तु ठाकुर न माना। यद्यपि गाँव उसके दबदबे को मानता था, परन्तु अव्यक्त लोकमत का दबदबा उसके मन पर भी था। इसलिए रज्जब गाँव के बाहर सपत्नीक एक पेड़ के नीचे जा बैठा, और हिन्दू मान को मन ही मन कोसने लगा।

उसे आशा थी कि पहर-आधी-पहर में उसकी पत्नी की तबीयत इतनी स्वस्थ हो जायगी कि वह पैदल यात्रा कर सकेगी। परन्तु ऐसा न हुआ, तब उसने एक गाड़ी किराने पर कर लेंने का निर्णय किया। मुद्दिकल से एक चमार काफ़ी किराना लेकर ललितपुर गाड़ी ले जाने के लिए रवाना हुआ। इतने में दोपहर हो गई। उसकी पत्नी को जोर का दुखार हो आया। वह आड़े के मारे धर-धर काँप रही थी। इतनी कि रज्जब की हिम्मत उनी समय ले जाने की न पड़ी। गाड़ी में अधिक धूवा लगने के भय से रज्जब ने उस समय रुक के लिये माना को स्थगित कर दिया, जब तक कि उस बेचारी की कम से कम कंपकंपी बन्द न हो जाय।

घटे डेढ़ घटे बाद उसकी कंपकंपी बन्द हो गई, परन्तु जब बहुत ठंड हो गया। रज्जब ने अपनी पत्नी का गाँव में डाल दिया और गाड़ीवान को जाद चलने का कहा।

गाड़ीवान बोला—“इन भर ही रज्जब रोग दिया। अब बल्दी चलने का कहा है।”

रज्जब ने आश्रम में नीचे न गये फिर बन्दा चलने का कहा।



"कैसे माँग उठूँगा? किराना ले चुका हूँ। अब फिर कैसे माँगूँगा!"  
 "जैसे आज गाँव में हठ करके माँगा था। बेटा! ललितपुर होना तो बतला देता।"

"क्या बतला देते? क्या सेंटमेंट गाड़ी में बैटना चाहते थे?"

"क्या वे। क्या अपना देकर भी सेंटमेंट का बैटना कहता है? जानज है मेरा नाम रज्जब है। अगर बीच में गड़बड़ करेगा तो साले को यहाँ हूँ ने काट कर कहीं फेंक दूँगा और गाड़ी लेकर ललितपुर चल दूँगा।"

रज्जब शोध को प्रकट नहीं करना चाहता था। परन्तु सामद अचरम ही बह भली-भाँति प्रकट हो गया।

गाड़ीवान ने इपर-उपर देखा। अँधरा हो गया था। चारों ओर सुनसान था। आसपास भाड़ी खड़ी थी, ऐसा जान पड़ता था कहीं से कोई निकला, और अब निकला। रज्जब की बात सुन कर उसको हड्डी काँप गई। ऐसा जान पड़ा मानो पमलियों को उसकी ठडी छुरी छू रही हो।

गाड़ीवान चुपचाप बैलों को हाकिने लगा, उसने सोचा—"गाँव के आते ही गाड़ी छोड़ कर नीचे खड़ा हो जाऊँगा, और हल्ला गुल्ला करके गाँव वालों की मदद से अपना पीछा रज्जब से छुड़ाऊँगा। रुपये वैसे भले ही वापस कर दूँगा, और आगे न जाऊँगा। कहीं सचमुच मार्ग में भार डाले!"

[ ५ ]

गाड़ी थोड़ी दूर और आगे चली होगी कि बँल डिडक कर खड़े हो गये। रज्जब सामने नहीं देख रहा था। जरा कडक कर गाड़ीवान से बोला—"क्यों वे बदमाश! सो गया क्या?"

अधिक कड़क के साथ सामने रास्त पर खड़ी हुई एक टुकड़ी में से किसी के कटोर कठ से निकला—'सबरदार, जो आग बड़ा।'



उपन न माना । बी-या— 'इसका सागण्डा बकनापुर कबो बाऊ बी ।  
 १०४ उक्त न मान नया । अगाई-क्याई हुन कुठ नदी मानवी ।'

औ-दना हो पदगा । उपन कहा— 'इस पर हाथ मही पमागै और  
 न इनका गैमा दुनै ।'

पुनन हाया— 'सा उगाई दान क इत मं । बाऊ बी । बाक पुनगापी  
 १०५ उक्त न मान नया । अगाई-क्याई हुन कुठ नदी मानवी ।'

उक्त पुनन हाया उक्त गापी न बाक नया । बापी हा पुनगापी नया  
 नया कानी न नया उक्त पुनन पुनन उगाई गैमा निष्काक कर न इन का  
 पुनन 'उक्त । बाक नया पुनन उक्त उगाई न नया नीक नया न नया—' नीक  
 उक्त उगाई । उक्त नया नया । उक्त नीक नया नया है ।'

उक्त नया नया नया । बापी नया नया नया नया नया नया— नया  
 नया नया नया नया नया । नया नया नया नया नया नया है ।'

नया नया नया नया नया नया— नया नया, नया नया नया, नया  
 नया नया नया नया नया नया है । नया नया नया नया ।'

नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया ।

नया नया नया नया नया— नया नया नया नया नया नया नया नया ।  
 नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया— 'नया नया, नया नया  
 नया नया । नया नया नया नया नया नया नया नया । नया नया नया नया  
 नया नया नया । नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया  
 नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया ।'

नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया  
 नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया—  
 नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया ।

नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया  
 नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया—  
 नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया नया ।'



उत्साह में अपने इकलौते बेटे को लिखा पढ़ाकर अपनी भावना का मुक्त पारा दिशाओं में फैलाने के लिए बाहर—बहराई भेज दिया था। पुत्र उस उम्र बड़ी आगा थी। ब्राह्मण के गुड़ सरकार उसको जन्म से मिले थे। बंद और मूर्ति उसके रात दिन के साथी बन गये थे। उसमें बुद्धि की उगाह था। वागाह-स्वरूप लेकर अधमता को पहुँची हुई पृथ्वी का उदार कर्म की गर्ति थी, ऐसा उसका पिता मानता था।

पिता न उस दिग्विजय करने के लिए भेजा था। पहले तो उस विजय-रत्न के दंड की समदमाहट डाक के द्वारा उस तक पहुँचनी और उसे बाग मनाय हुआ। उसका हृदय प्रफुल्ल होता और उसे ऐसा लगा कि मन ही जाता कलीभूत ज्ञान का समय अत्यंत निरट आ रहा है।

घर्म का उदार और भार्य ममृति का पुन स्थापन, और वनुष्य ममात्र और गुड़ तथा नाम्नी ब्राह्मण की श्रेष्ठता, गरल और मसावारी ममात्र और धमंज्या तथा त्यागी राजा—वे वरुण्य निद्रि के तट पर बग में बरती जाती दिमायी पड़ी। वह भाला ब्राह्मण काज मानर में लिची जाती हुई बधाइया का स्नेह में स्वीकार करने के लिए आकाशगुरं हृदय व लडा था।

वस्तु बाह ही दिना में आशाजनक पुत्र का समाचार जाता ही बन ही गया। वस्तु के प्रभावकारीन आकाश की भक्ति उसके निर्मल हृदय व राजा का सवायन हो जाता, वस्तु 'मस्मिवाणि धर्माणि मन्वाग्वाण-मन्वरा' का कृत्र पढ़कर बर हृदय को आस्वायन देता।

वसा बसा नर अगुड, विदनी वावु की चाई मन्द लहर उस अविशुनी के बाह में आगे वस्तु मन्वराण धर्म में उगहा थडा थी, नारड के भाग्य में उरका 'मन्वरा' का कृत्री के उगाह और वाहण पर उर भगसा था। जनि वन वरिह वगुण वगा \* वगुणवनी वगुणा के प्रभाव में उरकी





उमने गोविन्दराम अग्निहोत्री के विषय में पाँच मात आदमियों के पूछताछ की और अन्त में पता चल गया । किमी ने कोठरी दिखा दी । जिस पुत्र को वह धर्म पुरुष्वर मानता था उमका यह निवास ? एक ओर दीवारों की पवित्र थी, दूसरी ओर कोई सडा सडा मामने दर्पण टांग कर हजामत कर रहा था ।

अनिश्चिन स्वर में उस हजामत करनेवाले से पूछा—“गोविन्दराम अग्निहोत्री कहाँ रहता है ?” हजामत करनेवाले ने मुँह त्रिचक्रकर निस्कार के स्वर में ही पूछा—“क्यों क्या काम है ?”

‘मुझे मिलना है ।’—उमके सम्प्रेषन से सीझकर कुछ दृढ़ता से अग्निहोत्री ने कहा ।

‘उम छोकरे मे पूछां’—बहकर वह हजामत करने लगा । अग्निहोत्री ने कमरे में बँटे एक १-७ वर्ष के लडके की ओर देखा । लडका धरती पर बँटा था उमके सामने एक पाय का प्याला था और उमके हाथों में न था मसत न थी राटी किन्तु गेहूँ की कुछ जाली-जालीदार-मी चीज थी । स्टेशनों पर अग्निहोत्री जी ने मुसलमानों का यह पदार्थ बेचने देखा था इसलिए उन वस्तु को पहिचान गये । लडका उमको पाय में डुबो-डुबोकर खा रहा था । लडके के मुँह में मेल की तरह जमी थी और उमकी आँखों में कीचड़ था ।

लडके में धारी दूरी पर मँली-कुर्बंटी घांती पहिने एक स्त्री बँटी बँटी बाल काढ़ रही थी । इनको देखने के बाद अग्निहोत्री को सचय न रहा । साठ वर्ष पढ़क त्रिम बायस कन्या के माथ लडके का प्याह किया था वही गृधर कर रही थी । जागी हृदय से उमने उमसे पूछा—‘गोविन्दराम है ?’

‘कौन है ?’—दूसरा गति की प्रत्यक्षता कन्या वहाँ पढ़ते देखे हुए मसत को बँत पहिचान । गोविन्दराम बाहर गया । ‘क्या काम है ?’  
—उमने पूछा ।



वासुदेव मांत्रिनेवाली शक्ति मे दामन मांजि रही थी और नल बन्द हो जाने के कारण जूटे हाथ से उम बटे बर्तन में से पानी ले रही थी। एक वा पन्दे लड़के भी वह पानी उछाल रहे थे।

अग्निहोत्री की विचार करने की शक्ति दब गयी। वह बापिन आज और इन्द्राजे पर शण भर मरता रहा—और विचार करने लगा—यह गाविन्दराम अग्निहोत्री का घर ? और यहाँ का यह आचार ? वह यह बंसे महन करे और इसमें किल प्रकार रहे ? क्या करे ? इनने में उसका ध्यान घर की आर गया। चून्हे पर की दाल उपजाई, वह स्त्री उठी और बैसी की बैसी—न हाथ धोया, न मोठे की धोती पहिनी और चून्हे के पाव जाकर दाल उतार आवी। यह देखकर अग्निहोत्री जी की दुविधा दूर हो गयी। उन्होंने पगड़ी गिर पाव रखकर पोट्टी हाथ में ली। यह अधोपदि देखकर उनका गिर धूमने लगा।

'म बाहर हो जाऊँ, फिर आऊँगा। कहकर वह थल पड़े। अग्निहोत्री बहुत से बाहर निकला। उसकी तीक्ष्ण श्रियो का तेज खण्डित हो गया। उसकी देह का बल जाता रहा। उसे स्मरण न रहा कि मैं स्वयं किस सवार में हूँ। उस समय न पता कि ऐस सवार न में किसलिए आया। किसी से मार्ग पूछकर उमने समुद्र की ओर चलना प्रारम्भ किया।

सागर देखकर उमके मन की माणना हुई और स्तान-मुग्धा करके बहुतकम्प हुआ। जो स्त्री और लड़का वह देखकर आया था वे क्या मचनूष ही गाविन्दराम के थे ? इमे मान लेने के अनिश्चित कोई मार्ग न था। उदहाकर उमने चारों ओर देखा। सामने थोड़ी दूर पर जाकर के मन्दिर के मकनपुष्पी शिखर पर से जगका चक्रा उमको आश्चर्यजन कर रहा था। उमके हृदय का कुछ अविश्रामन मिला।

अन्य में अज्ञानता के कारण ही मरणका काल होना नहीं। यदि और यह हाथ मचन के बन्दे। न मचन और उमने मचन की पूजा की।



'नहीं',—स्त्री ने कहा—'मुझे तो वहाँ कुछ अच्छा नहीं लगता ।  
 'तु इतने क्यों बड़ई म रही, परन्तु मुधरी नहीं, चल-चल ।'—कहकर  
 साँबन्धराम आग्रह पूर्वक उमकी ईरानी की दूकान में घसीट ले गया ।  
 अम्बिहायी की आँवा में कुछ जिविज प्रवार का तेज समा गया ।  
 अन्धकार में भी ये चमकन लगी । उम दूकान म ते दो मियाँ भाई निरुन  
 भीर लहरकते हुए चल गये । अम्बिहायी ने निश्चय छोटा और शिवा-  
 लय की आर कल्पन मुद्र गया । उमकी लगा कि मुष्टि जलकर रास हो  
 गयी है । तेकर चिन्ता ने उठकर आये हुए नव वहाँ घूम रहे हैं । मन्दिर को  
 बध्याता उम दमशान म भी बीभत्स लगी । उमन मन्दिर के गर्भ द्वार पर  
 आकर शहर का प्रणाम किया, परन्तु सकर कुछ वृषिम-मे जेँव । जग-  
 पाल का विद्युत् का प्रकाश अन्धकार में भी अधिक कष्टकर लगा । पुत्राग  
 आग्रह का देखकर रागते लड़े हुए गये । एक कोने म हाथ बाँधकर  
 बह खड़ा रहा । पाल ही का प्रकाश बँटे जाने कर रहे थे ।

'बाई, कल सुठ के वहाँ मकलगी है. जानना ?

'है ।'—दुमर ने कहा—'व' राम

'श्या

व' व' म' मुनक है ।

जि कहेन जलगा ? ...

... ..

... ..

...

...

...

...

...

...

...

...

...

...



को रक्षा करने लगा । वह समुद्र में जागे बहना गया, सूर्य-किम्ब पर निरपरा  
 नवा का तब बलगाया जोर मूढ़ ने बोला — 'गत्यास्त्रिपुरंरेष्यं ।' लड़के  
 उस क मूढ़ तक आ गयीं, ऊपर चढ़ीं और तक पहुँचीं । वह सिर नेत्रों के  
 साथ गया । अग्नि कद हो गयीं । गिणा अदुपर हो गयी । उनके गिर पर  
 पाती बहन लवा ।

उस मन्त्राणि भाषा न अनन्त राग देने । उसरी अग्नि के गामन  
 मूढ़ किम्ब नापना रहा । उसने आहार क दमन किये । जाला में हार  
 गया, कोई हीरो उदान हुए कह रहा था—

'वस वस द्वि घर्मस्य गजानिभवति भाग्य ।

अन्वृथानमपर्मस्य गदात्मान मृगाम्यहम् ॥'

उसने 'गत्यास्त्रिपुरंरेष्यं' बालना प्राप्त किया, परन्तु सूर्य किम्ब पुन  
 गया, नाव बन्द हो गया और गया गिणावी में अन्धकार हो गया । अग्नि-  
 दास को अदुर्गामी पुन हो गई ।





लेता । कुछ लोग उसे पायल कहते, कुछ सनकी समझते और कुछ लोग उसे महापुरुष मानकर उसमें श्रद्धा रखते ।

मद्रासी होने के नाने वह रंग में मुझसे सवाया या और मेरे ही समान उसको भी वह धारणा थी कि राम और कृष्ण हमारे ही रंग के ही रहे होंगे । किन्तु श्रीकृष्ण जी से उसे एक ही बात की चिन्ता थी कि लाल की समानता होने हुए भी उन्हें तो सोलह नट्य रानियाँ मिलीं और पिल्ले को एक मिट्टी की रानी भी न मिल पायी ।

रंग की महापुनरुत्पत्ति होने पर भी वह अपने को कामदेव ने रम नहीं समझता था । यद्यपि नववर्ष होने के नाने मेरा वह धर्म तो नहीं है कि मैं पिल्ले का नख-सिल्ल धर्मेन कर्मे किन्तु क्याकार के धर्म की रक्षा के लिए आवश्यक समझकर इतना ही कह देता हूँ कि जब वह अपने काले मुन्च शरीर पर अपवहियाँ कभीज पहिन कर, लूंगी बांधकर, पेंगावरी चप्पल पैरो में डालकर और माये पर लाल टोका देकर निकलता था तब तेना लगता था मानो माध्यदेश के जंगल से पकड़े हुए किसी काले भानु को उजले कपड़े पहना कर उसके माये पर लाल पकी हुई भड़बेगी टांक दी जा हा । किन्तु पिल्ले उस समय अपने मन में यही समझता था मानो नगर की सभी कुमारियाँ हाथों में वरमाला लेकर अपने अपने द्वार पर उलुका के साथ मेरा वरण करने के लिए खड़ी हो । वह फाट्टे की हिन्दी बोलता था और यदि उसका रंग और नाम ही उसका भेद न खोल देते तो कोई सपने में भी नहीं समझ सकता था कि पिल्ले जी विष्किन्धा से चने आ रहे हैं ।

पिल्ले ने काश्मिरी हिन्दू मन्त्र 'गणेशाय नमः' मन्त्र, समाजवादी दल कम्प्यूनिस्ट पार्टी आदि मन्त्र मन्त्रांशों में 'शान्ति-शान्ति' नाम लिखाकर कभी कभी उदात्त कर्मा बोल उठाया कभी मन्त्र 'शान्ति' कभी नामिका और अन्त में 'शान्ति' का 'शान्ति' उदात्त कर्मा बोल उठाया ।



निरीह पिल्ले ! मेरी तुम्हारे माय बड़ी सहानुभूति है । जिन देश में दहेज का द्रव्य घर में न होने के कारण लाखों कन्याएं कुमारी रहकर बुझा तक वाट देती हैं, जहाँ अपने विवाह की चिन्ता में पुलने हुए माता-पिता की मनोप्यथा को सहन करने वाली संकड़ी कन्याएं यम को वरप करने के लिए विवश होती हैं उन्ही देश में ऐसा एक भी पिता नहीं जो अपनी कन्या लाकर तुम्हें दे डाले , ऐसी एक भी कन्या नहीं जो यम के बर्से तुम्हारे गले में वर माला डाल दे ? काला रग ही बाधक हो ऐसी भी बान नहीं है क्योंकि पिल्ले के रग से भी अधिक गहरे रग वाले, पिल्ले से भी अधिक विकृत रूप वाले और पिल्ले से भी कहीं अधिक उबड़, मूर्ख, देहाती और दम दम बच्चों के बाप बन बैठे हैं । उन्हें भी तो कहीं पत्नी मिली होगी न ? पर न जाने पिल्ले ने ही ब्रह्मा की दाढ़ी का ऐसा कौम-सा बाल तोच लिया था कि उसी के माथे से पत्नी मिलने वाली रेश्वा उस चौमुँहे ने स्वयं मिटायी ।

छोटे दिनों में वह मुझे मिला नहीं था । मैंने समझ लिया था कि या तो उसकी साँठ-गाँठ बँठ गयी होगी या वह कहीं बाहर चल दिया होगा । रमते जाँगी का टिकाना ही क्या ? दो चार दिन तो मैंने पूछताछ भी की फिर मैं अपने काम में लिपट गया । मैंने पिल्ले को भूलना प्रारम्भ कर दिया ।

रूपोगवत मुझे बम्बई चला जाना पडा, इतलिये पिल्ले और उसकी स्मृति दोनों मुझसे दूर हो गयी ।

पिछली दीवाली के दिन मैं अपने एक मित्र से मिलने छान्ताबूज चला गया था । वही बात-बात में उसने पिल्ले की चर्चा छोड़ी और बहने लगा कि वह आजकल बर्बई में एक हिन्दुस्तानी परिवार के साथ रहता है । बर्बई में गुजराती, मराठी, गोधानी, मद्रासा, सिन्धी, मारवाड़ी, पारसी, सिख, बाँहरा, खोजा, मुसलमान आदि अनेक भेदों में हिदुस्तानी भी एक भेद है जिसका अर्थ है मुसलमान का रहनेवाला । मुझे बड़ी उत्सुकता हुई













श्रीपि भयकाकर नकारात्मक उत्तर दिया : मैं समझ गया कि पिल्ले के उठ अभी सीधे नहीं हो रहे हैं ।

पिल्ले से मिलने पर मुझे इतनी प्रसन्नता हुई थी कि मैं जड़ लोटकर घर आया तब कहीं मुझे सूझ जायी—जरे पानी तो मंने दिया ही नहीं ।

उस दिन मैं पिल्ले भी मेरे पास आने जाने लगा और शारदा जो भी । कभी वे दाना अकेले-अकेले आते, कभी दफ्ठे, और यह कम लगभग तीन महीने चलता रहा ।

'प्रसाद' जी ने आबकाल के महिला-अन्दोलना में डरकर और 'डॉर, गंवार, मुद्र, पम्, नागी' लिखनेवाले सर्वकण्य कविना-नामिनी-काल्य शास्वती मुलसीदास जी के विरुद्ध शिष्यों का मुला विरोध देखकर उन्हें बहलाने के लिए झूठे ही लिख दिया है—

'नागी तुम केवल थदा हा विश्वास रखन नग पद तल में ।'

और शिष्यों भी इसे पढ़-सुनकर फूली नहीं समानी । पर वे यह नहीं जानती कि 'प्रसाद' जी ने भी हममें पुरुषों को बड़ा मित्र करते हुए कहा है कि—'तुम विश्वासवादी पुरुष हिमालय के देशों तक 'धुद्र मुष्क' पीरूय योन में बहा करो ।' इसलिए मैंने इन पक्षियों को 'श्वानाः सुपाय' इस प्रकार कहल दिया है—

नारी कभी नहीं हो थदा

पर अब ईश्या काव कभी है ।

कभी नहीं हो मानव-माना

पर अब तप की बष्ट कभी है ॥

अपने शिष्यों के मध्य में कभी यह रूप वाक्य अवश्य सुना हुआ कि, 'श्रीपि का मित्र ही था वह' । यद्यपि 'प्रसाद' जी अपने पत्रों के पास आज तक इसका कोई उल्लेख नहीं करते हैं । यद्यपि यह भी श्री-शर्म से



टमोडिंग में जब कभी बाहर जाता, अपनी पत्नी को साथ ले जाता। उसे प्योसा देकर मैं अपने आत्मा को धोखा नहीं देना चाहता था। मैंने भी फिर क या या बहिये सारादा के घर जाना छोड़ दिया। पर वे दोनों या अकेले किसी जोगहू पर या केब मोटर के अड्डे पर चिल्ला चिल्ला कर 'बनदूर' अचन दिशाधी पड़ जाने और वहीं नमस्वार-प्रणाम भी हा जाता और नुवाडमण्ड भी ।

उद्यमग चार महीने बीत थये। मैं समझता था कि इस बीच या या सारादा ने ही कह दिया होगा—

'मुझ मस पुभव न मा मस नारी'। या फिरने ने ही कह दिया हुंसा—  
'अपिन है मेग घोवन मन ।'

स्वाकि मैं सारादा जी के प्रथम दर्जन के हीदिन समझ गया था कि विभाग न इनके भाव पर भी फिरकी भाग्य रखा वाला छाया ही ठोक साग है। उनका मुन्दरी कहकर मुन्दरला का, कामलागी कहकर कोमलगा का, नीलवनी कहकर घोस का, मुगादिनी कहकर हाम का, ह्यगादिनी कहकर ह्य की गान का, लम्बागी कहकर लम्बा का, मद् भ्राविणी कहकर मद् भ्राविना का, विद्यादिनी कहकर शृगाण बेष्ठाभा का मैं एक साज बना देना नहीं चाहता था, एक ना स्त्री [नचाहल हुए भी उन्हें सर्वोहीकृत की विचन हो रहा है] दुसर कर्णशर्दिनी, एक तो निकलीकी; फिर नीम थी। इसक पनि हान का सीताप्य बही प्राण कर सकना या फिरने निकल दन बन्ना न नीपलाकारन, फुडर जन्मा न सम साहन , इक्कीव जन्मा न मयव काहन और पञ्चमि जन्मा न लडमी साहन बनन की अर्थादिद नकरा का ह्याय। मरु विजयाम गान मगा कि फिरकी न इतनी बार साहन नरु का साहन न इतन नरु का नम महारव को के मारव इतन नरु का साहन न इतन नरु का नम महारव को के मारव  
... .. विन्दी



मेरी श्रद्धा और भी गहरी हो गयी। मैंने श्रद्धा-विह्वल होकर कहा—  
'भल न जाना हमें।'

अपनी पत्नी को भी मैंने समाचार सुनाया। जिसे पृष्ठे मुंह भी गिन्न  
नहीं भाता था वही पिल्ले की इस मरणा में प्रभावित होकर उसके लिए  
चार लड्डू ले आयी—'मुंह मीठा कर लो।'

जिस दिन वह दिल्ली के लिए बला उस दिन मैं भी फल माला लेकर  
उसे विदा देने चोरी बन्दर तक गया था और मेरी पत्नी भी हठ करके  
मेरे साथ गयी थी।

बर्गवादी दल के अनेक युवक युवतियों का समूह वहाँ पहुँचा हुआ था।  
द्वितीय श्रेणी के इन्ट्रे में तीन स्थान घिरे हुए थे, एक पर महादेवी जी, दूसरे  
पर शारदा जी, तीसरे पर स्वयं पिल्ले। शारदा जी, और उनकी माता जी  
दोनों उन्ने दिल्ली तक पहुँचाने जा रही थी, उनका घर भी—मैठ भी—  
उत्तर ही था। बड़े भूमधाम में विदाई दी गयी, सजने फूल मालाएँ पहनायीं।  
मेरी पत्नी ने अपने हाथ में फूल माला उसे पहनाई और 'कहा-सुना नाद  
करना' का परिचित मंत्र पढ़ कर पिल्ले और शारदा से घुलघुल कर बाते  
की ओर अन्त में जब पिल्ले ने कमफर मुझे छाती से लगा लिया तब तो  
मैं फूला न समाया, मानो स्नातन ने ही मुझे गले लगा लिया हों। सबकी  
दृष्टियों में मैं ऊँचा उठ गया। पिल्ले ने कहा—'सबसे पहले मैं तुम्हें  
लिखूँगा।' मैं अपने मौनार्थ पर भीमना फूल उठा और देखा कि सब की  
ईर्ष्यालु दृष्टियाँ मेरी महला में आशान्न ह।

गाड़ी ने छोटो दी गाड़ी चल पड़ी, और हम लोग अपनी महला पर  
जब चढ़ते हुए लोटे आय जाते सबसे अधिक मन तो मुझे तब जाया जब  
... की पत्नी न कहा— बड़े अच्छे थे बच्चे।

ःमा का शान्तिपूर्ण जे न काल की प्रतिक्रिया और अनुकूलता बहा है।



इन पत्र को पढ़कर एक बान तो यह नई ज्ञान हुई कि महादजी जी के जिनने नाम मंने कल्पित किये थे—विष्णुकपोला, करालपोपा, द्रव्य-वदना, कटाह-शरीरा, महिष-मान-मदिनी, मानव हस्तिनी आदि, वे पत्रों निरर्थक हो गये और उनका नामकरण करने वाले पुरोहित पर बड़ा राग आया कि यदि उस मूढ़ को केवल पात्रवाची ही नाम रखना था तो गज कडाई, रामहडिका, राममटकी, रामकुठला क्यों नहीं रखा, यह गाम कटागो क्या शरिड नाम उसे सूझ ।

पत्र पढ़कर पीछे उलटा तो उम पर पिल्ले ने लिखा था—

‘मंने और शारदा जी ने कम्यूनिस्ट पार्टी ने त्याग पत्र दे दिया है । विवाह में अवश्य आना ।’

और उसी के नीचे महिलाई अधरो में शारदा जी ने लिखा था—

‘भाभी जी को भी अवश्य लाइयेगा ।’

पत्र पढ़कर मं कितना भुँकलाया हूँपर यह तो आप इनी बान न ममक सकते होंगे कि उस पत्र को मुरेड तुरेडकर मंने तत्काल नदी की टोकरी में फेंक दिया । मंने अपने महत्त्व का जो काल्पनिक प्रासाद उठाना था वह इस पत्र ने क्षण भर में ध्वस्त कर दिया । जो पिल्ले अपने अभिन्न मित्र ने इतना कपट करके इतनी सब बातें लिखा सकता है, शारदा जैसी अरूपा कन्या से विवाह करने के लिए इनना रूपक बांध सकता है यह न तो पागल हो सकता है, न सनकी । और महापुरुष ? छि, वह महापुरुष की पत्र धूलि भी नहीं हो सकता और मं पिल्ले के उस प्रवचनापूर्ण रूप पर पभीरता से विचार करने लगा जब उसने मक पर अपनी महता का आतंक जमाने हुए अवश्य कहा था— मं कम्य जा रता है ।’





छोड़ दिया था। पलटूराम ने विज्ञान नहीं पढ़ा और न किसी प्रयोगशाला में प्रयोग किया, किन्तु ठर्रा और जल का मिश्रण इन चतुराई में करते थे कि मसाम क्यूरी की स्वर्णता आत्मा भी हर्षानिरेक में विह्वल हो उठती और उनकी मधुशाला के सदस्यों को तो इसका कभी मन्दह भी नहीं होता। पलटूराम साहित्य के उम सिद्धान्त के अच्छे ज्ञाता थे जिनके अनुसार कला का छिपा लेना ही सच्ची कला है।

वह हिमाच जोड़ना न जानते हो, किन्तु धन जोड़ना जानते थे, वह साहित्य न जानते थे, किन्तु साहित्यकारों को जानते थे। उनमें प्रतिभा न थी, किन्तु प्रतिभा उनके पास एकत्र हो जाती थी। द्रव्य-वस्तु के व्यापार से द्रव्य बढ़ता है, ऐसा जान पड़ता है। उनके पास भी रुपये इसी गति में बढ़ने लगे जैसे ज्वर में प्वाण बढ़ती है। इसी बीच यूरोप में लड़ाई छिड़ गयी। व्यापार के अनेक माधन दिखायी पड़े, मानो अलोबामा के खोह का द्वार खुला। पलटूराम ने एक लपाया और चार पाया। कुम्हार के आँवों की अग्नि में मिट्टी के बर्तन पक्के हो जाते हैं, समर की अग्नि में लोगों के घर कच्चे से पक्के हो गये। पलटूराम की कोठी बन गयी। उनकी संपत्ति जइ उसी परिमाण में गिनी जाने लगी जिस परिमाण में रावण के पुत्र और नातो गिने जाते थे। गोस्वामी तुलसीदास ने बताया है कि किस अवस्था में किसे छोड़ देना चाहिये। पलटूराम ने अपने नये बानावरण में मधुशाला किसी और रम-प्रेमी व्यक्ति के हाथ में सौंपी और खोहे के व्यापारी बन गये। ठोस होने पर व्यापार भी तरल में टोम वस्तु का करता उन्हें डीक जका। सरकारी कर्मचारियों का कृपा-बटाव हुआ और पलटूराम को आठमस्य मिल गया। कहा जाता है कि बृद्धकाल में गढ़ने को भी किसी व्यापार का आठमस्य मिल जाता न; वह लक्षपती बन जाता। पलटूराम का उद्योगों का क मधुच इ बन गये। रामचन्द्र बन गये ना रावण के माने , म ना उन गये डावा पर रावे मार्ग।



इस प्रकार प्रणाम किया मानो साक्षात् विष्णु भगवान को नमस्कार कर रहे हैं ।

पलटूराम ने देखा । पूछा—‘कहिये ।’

मन्त्री जी बोले—‘आप का ही दर्शन करने के लिए आया हूँ ।’ पलटूराम खुप रहे । उन्होंने सोचा होगा मेरे दर्शन के लिए कोई आया है तो मैं देवता हूंगा और देवता मौन रहने हैं । थोड़ी देर दोनों व्यक्ति खुप रहे । फिर मन्त्री जी बोले—‘अखिल भारतीय हिन्दुस्तानी मण्डल का वार्षिक अधिवेशन है । सब लोगों की बड़ी इच्छा है कि आप ही उसके सभापति हों ।’

मूर्खता देवी का अपरिगमन प्रमाद पाने पर भी इतना तो वह सीव ही गये थे कि ऐसे अवसर पर क्या कहना चाहिये । बोले—‘इसके लिए तो कोई योग्य व्यक्ति चुनिये । मैं अपत्र वहाँ क्या करूँगा । हम लोग उन्हीं बातों की प्रशंसा में प्रसन्न होने हैं जिन बातों की हममें कमी होती है । जब मूर्ख को कहा जाता है कि आप बृहस्पति के बाबा के समान हैं तब वह प्रसन्न होता है ।’ मन्त्री जी ने उन्हीं मूर्खों का सहारा लिया जो पाण्डव के काल में चले आ रहे हैं । कहा—‘कालेज और विश्वविद्यालय में पढ़कर ही कोई विद्वान् नहीं होता । आपन समार के विश्वविद्यालय में शिक्षा पायी है । और आपका तनिक सा मकेत्र हो तो किसी विश्वविद्यालय से डी० लिट्० दिला दूँ ।’ पलटूराम ने सोचा—पलटूराम डी० लिट्० कानो को बिना मधुर लग रहा है । पलटूराम बोले—‘आप लोग तो बहुत तग करते हैं । फिर यदि आप लोगों की सेवा न करूँ तब भी नहीं बनता । कहिये क्या करना होगा ।’ जैसे कई नवविवाहिता बध अपने पति से बोल रही हो ।

मन्त्री जी ने कहा—कृपया कुछ नहो । बन्ध बलिबगा  
पलटूराम—बन ।

मन्त्री जी बोले—‘... । और कु... न... न... ।’



मुसलमानों को मनभेद मिटाना चाहिये । हमारा प्राचीन देश भरतखण्ड मलमनमी के लिए प्रसिद्ध है । हमारा आदर्श बंल है जो स्वयं मूसा मार्ग है और हमारे लिए अनाज छोड़ देता है । आप मुसलमानों की मलाई कोचि, यह आपके मारी है । हिन्दी और उर्दू हटाकर हिन्दुस्तानी का व्यवहार कोचि। नही देश का मूपण होना । आपन के प्रेम के रस में हमें भीजना चाहिये । हम एक दूसरे का मार ग्रहण करें, गले मिलकर एक दूसरे को मेटें । कलह से मीठ में दे डालिये, स्वाधीनता का मोर आ गया है । हमें इनका स्वागत करना चाहिये । मैं मापण देने के योग्य नहीं हूँ । विशेषतः आप के विद्वानों की मीठ में ।'

आपण का क्या परिग्राम हुआ कहने की आवश्यकता नहीं ।



सहायता से अग्नि प्रज्वलित कर दी गयी। रक्त चन्दन, रक्त पुष्प, रक्त-वस्त्र, तथा पूजन के अन्य सभी रक्त उपकरण लाकर शृंगपाल ने पार्श्व में रक्त दिये। जलनी हुई अग्नि-शिखा के रक्तान्न प्रकार में वे सब और भी अक्षय हो उठे। बलि के लिए एक महिष लाकर यूप में बाध दिया गया तथा रक्तान्न मदिरा, उड़ेल उड़ेलकर तान्त्रिक पीने लगा।

पर्याप्त मात्रा में मदिरा पी चुकने पर जब उसके लोचन ही नहीं, कपोल और चिबुक भी महारण हो उठे, तब उसकी आत्मा पाकर शृंगपाल एक नर-कङ्काल ले आया। व्याघ्र चर्म के ऊपर उन कङ्काल को रखकर तान्त्रिक ने अपना आसन बनाया और उसी पर वह बैठ गया। नरदण्ड के अस्थि पाशों में रखे हुए पूजन के रक्त उपकरण कुम्भारजनों के विशेष में घोर भीषणता की मूर्ष्टि करने लगे।

मदोन्मत्त तान्त्रिक महासन से उठा। एक हाथ में उमने छप्पर लिग और दूसरे हाथ में तीक्ष्ण खड्ग। यूप बद्ध महिष के पास पहुँच कर अपने सधे हुए आपात द्वारा महिष की गर्दन काट दी। पृथ्वी पर छटक कर बिजान् शृंगी वाला मस्तक तलफलाने लगा और दारौर छटपटाता हुआ पृथ्वी पर गिर पड़ा। बहती हुई रक्त की धारा पहले तो छप्पर में डेकर तान्त्रिक ने महाकाली के चरणों पर चढ़ायी और फिर शीघ्रता के साथ अनेक बार छप्परों को भर भर करके स्वयं स्नान किया। एक छप्पर में जमते हुए रक्त को भरकर उसने हवनकुण्ड के पास रक्त दिया। उस अन्न की निस्तब्ध रात्रि में शोणित-लिप्त तान्त्रिक की भीषण आकृति देखकर नित्य का अभ्यस्त शृंगपाल भी काँप उठा। मन्दिर के आग्नेय कोण में बैठी हुई तान्त्रिक की शिष्या इनामदागी भी भय में त्रस्त हो गयी।

तान्त्रिक न रक्त वष के उपकरणों में महाकाली की पूजा की और लोमप्रस्थि-रक्त मर्त्य-वाम लक्ष्म हवन करने लगा। पंचाक्षर वन्द्य म समस्त मन्दिर भर उठा किन्तु अज्ञान जन की भक्ति हवन करने





और बहरत को घातघात करने की आज्ञा मिली । परन्तु भद्रदत्त ने पगोडा के चित्तु अंग गुरुका, त्रिमूर्ती वैकुण्ठ कीर्ति पाठालियुक्त की विद्वन्मण्डप में छापी हुई थी । गजगना भ भेंव दिया । शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुआ । काशी के पाठकन एव सिद्धान्त स्पष्टिकन होना था रहा था । उनकी पत्नी के गर्भ में गजावक नहीं हो गई थे । उनकी दिग्विजय-लाजगा का उच्च प्रमाण पूर्व पाठु होत लगा ।

गाड़ी शुरु क विनयन की आगाजय प्रतिभा ने काशीर की विदुष आरूक हो रही । पवनक क उगत अग्ने प्रतिशुद्धी का हाथ पकड़ दिव बाह तक शास्त्रा कटता रही हुई बोली—

अग भाव देना ! और सर प्रस्ता का उत्तर था ।

न कन आका बोला भ कोन भी दालि वो त्रिने दयन ही पुनक क नाग प्रोक्त बन दिमा न भाव ली और उम पगा बाल गता, देव उनके अठमा को अर्थात् न निराक कट कही दुगद स्वान पर दिमा ने गव दिवा और एक उम नाग क सम्पूर्ण महाहीन, माहृपन, शास्त्रार्थ की प्रोक्त निरन्तर हो गया ।

वा वा विदुषा कहता बोली था वह मव भद्रदत्त क पुन न आका क 'अग भाव देना एक कहन कट कहीक पुन गतीकन गी न उम बोली बोली' के ही न कन भ उम महन प्रोक्त-ननुणा नागि ने कहा—

अच्छत पुनक ! अब उठकर शास्त्रार्थ सम्पन्न भे प्रान गतिनरी की आका दिवत की पालना स्वरे कर वा ।

अकनटिअ दुवता ही अर्थव देन वह आका की भाव ली और उगाव कर ली । कन न उम भावानी न कहा— अच्छत अर पुन गतिनरी न कट कही कीर दिव 'अग भाव देना एक कही गहन उगावत भे अठम कहता ।

वह बोली की क उगावत की उमभा भ अकन उगावत अगावत कन कन उम पना कही न उगाव न कन व वह कही का गही है ।



पुत्र आया। वहाँ मय समाचार सुनकर वह स्तब्ध हो गया। गुरु ने उठने आकर नारी घटना कह सुनायी।

उमने कहा—'बन्धु ! उस कारमोरी विदुषी को समोहन विद्या की मिद्धि प्राप्त है। उसकी तात्विक शक्ति के सम्मुख तुम कुठ न कर सकोगे। अतः प्रतिशोध का विचार त्याग दो।'

पर भैरवदत्त का अज्ञ करण अन्याय, अपमान और प्राप्त प्रतारणा को ज्ञाप्ता में दग्ध हो रहा था। उमने अपने जीवन का लक्ष्य बनाया उन्ही दोनों स्त्रियों को अपमानित करना, उनके जीवन की सुख-शान्ति विनष्ट करना और पाटलिपुत्र के सम्मानित पद से उन्हें नीचे गिराना।

तात्विक मिद्धि प्राप्त कर प्रतिशोध लेने की कामना से वह कामरूप के कामाक्षा मन्दिर में जा पहुँचा।

काराणिक भीषणानन्द की पाँच वर्षों तक अनवरत और भस्त्रिपुत्रे परिचर्या करने के अनन्तर उमने मारण, उच्चाटन और कीलन की मिद्धि प्राप्त की। अन्त में अपने हृदय का आशय आचार्य भीषणानन्द से व्यक्त किया। आचार्य ने महाकारी स्वामी का अनुष्ठान करने की अनुमति दी और वह भी कहा कि दीपावली की रात्रि में पाँच वर्षों तक इस अनुष्ठान का वार्षिक आयोजन करना पड़ेगा, जिसमें प्रतिवर्ष कमला विहाय, मेरु, उष्ट्र, महिष और नर के सोचाम्बि मुक्त नाम की बलि देनी पड़ेगी। पर मङ्गल की उपायना को अपनाना होगा और भीषण परिस्परिवा को मरुना होगा। अन्तमें उन्हने कहा—'बन्धु भैरवदत्त, आत्र मे तुम्हें से अन्तः शिष्य दीक्षित करना है, परन्तु मैं चाहता हूँ कि इन प्रयोगों की भाषना के स्थान पर तुम अग्निमार्दि मिद्धि प्राप्त करने का प्रयत्न करो।'

पर प्रतिशोध की भावना से विकृत भैरवदानन्द का कुछ अच्छा न लगा। हठ करने पर आचार्य ने महादवी स्वामी की पञ्च-वार्षिक अनुष्ठान विधि

विस्तार से मध्य समझाया और निष्कर्षतः कामरूप का लक्ष्य ही बनना पड़ा।

















# शे शे

सुश्री कमलिनी मेहता

'टन, टन, टन ...'

मध्य रात्रि की घोर निस्तम्भता घण्टे की गम्भीर ध्वनि से काँप उठी—मेरी भी निद्रा भंग हो गयी। मैं दिन भर की यात्रा से थक कर बही, घण्टेघर को चबूतरों पर सो गयी थी। उस सन्नाही रात में घण्टे की ध्वनि बड़ी ही भयावनी लग रही थी। तबसा: उसका कर्णभेदी नाद बन्द हो गया और उसका स्थान एक धीमी कराह 'शे शे' ने ले लिया। वह कराह इतनी ददं भरी थी कि मैं थोड़ा पड़ी, अनायास मेरे मुख से निकल पड़ा— 'यह कौन 'शे शे' की ध्वनि कर रहा है ?'

'यह मेरी ध्वनि है।'—मैं और अधिक शक्ति तथा स्तम्भित हो उठी। धीरे धीरे फाड़-फाड़ कर अवकार में इधर उधर घूमने लगी पर कोई भी दिखायी न पड़ा। मेरा हृदय भय से काँप उठा, फिर भी मैंने साहस बढ़ा कर प्रश्न किया।

'तुम कौन हो, कहाँ हो ?'

'मैं तुम्हारे मिर के ऊपर हूँ, चीन देश का विशाल घण्टा हूँ।'

'क्या कहाँ घण्टा ? अद्भुत ! तुमने मानवीवाणी कहाँ से पायी ?'

'संसार में कभी-कभी ऐसी भी घटनाएँ हो जाती हैं जिन्हें देख कर मनुष्य अचम्भे में पड़ जाता है। क्या तुमने कभी यह भी सुना है कि किसी घण्टे का निर्माण करने में पिशाचों की अपनी पुरी का बलिदान करना पड़ा हो।'

'अर्थात् ?'

'अर्थात् यही कि मुझ मर्चि में डालने के समय धातु के साथ धातु-विज्ञान बुजाल हुआय की मुन्दरी कन्दा का रक्त भी मिलाया गया।'



बड़ाई पर आ गया । तुल्य तथा शोभ के गर्म गर्म प्रीति उगड़े कथान भिन्न-  
भव--बार पहली बार उनकी विद्या का परिहास हुआ था ।

क्याही ने आनन्द गुणी गिना को देखा--उनका कारिणीन वक्रा हुआ  
अभू प्यारिन मूत्र देखा--ध्याया से उगडा हृदय अभीर हो उठा, काँपने  
हुए अचरी से उगन पुकारा--

‘गिना आ ।’

गिना ने अचिन्त मारी और अपनी इकठोरी चेंडी को हृदय में लगा कर  
एक बार फिर कूट-कूट कर रो गया । क्याही भी रोने लगी । अब प्रीति कुछ  
कम कर चुकाने ने उमर अपने दुर्भाग्य की गल्पुर्न कवा जोर पाव ही कडा  
पराशा मनायी ।

अनन्य क्याही ने एक टुक गिना के मूत्र की बार अपना ग्लास  
हाथ में लिया--

गिना आ । मनुष्य का अकारणता से विचलित नहीं होना चाहिए ।  
आप फिर से अपना कारिण्य । ईश्वर बना लूँ, वह अब तक इन बार महकना  
करना । मैं भी इसमें प्रयत्न करूँगी ।--शीर कृपावृत्ति एक बार  
देना तो एक बार काल को पारिवर्ती उलटने लगा ।

अनन्य क्याही ने न मरी । उधका लहा भा मन्व वहा कावगा ग्ला  
कि वही से गुनी जीवित निज भाव कि एक समझाए न मरे गिना का  
हुए हुए ही मरी । अकारणक एक उमर गुणी का अकारण ही भाषा का दूर ही  
वहका ही कलहाही की कवगा न रहगा वा जोर ही अविश्व जीवित वरगा ही  
का । अकारण हृदय भासा न मन्व क ही मरी ।

दूर १३५ -

अनन्य कवगा न मरी वह कवा मन्व वरगा क  
कम मरी अकारणक एक उमर गुणी का अकारण ही भाषा का दूर ही  
वहका ही कलहाही की कवगा न रहगा वा जोर ही अविश्व जीवित वरगा ही  
का । अकारण हृदय भासा न मन्व क ही मरी ।



देखर का नाम ले कर ज्वा ही धड़कनें दिल से उसने सचि में धानु झांसे कि उसके कानों ने एक भीन्कार सुनी 'पितात्री' और कोआई उसकी अला क मम्मूष ही उस तरल अग्निमय धानु धारा में बूढ़ पड़ी। पिता पुत्री का बचाने के लिए भागटा पर उसके हाथ लगा केवल उसके पैर का एक जूता। वह मुञ्जित हाकर वही गिर पडा। समस्त जनता अवाक् होकर उन अनशुनी घटना को देखती रही। इस बलिदान का रहस्य कोई न समझ सका।

काआई का अपने हृदय में रख कर मैं तैयार हो गया। पर मेरा जन्मदाना दुःख और शान में पागल हो गया और जब तक जीवित रहा हम भरे पारों और फरे लगाता रहा। कभी-कभी दुःख तथा बोध में अधीर हो कर वह मूक बूढ़ी तरह भकभार-भकभोर कर बबाला और उनसे ही जब स्वयं में 'काआई, काआई' चीन्ता रहता जब तक कि वह सभे पक कर मुञ्जित हाकर न गिर पडा।

एक दिन गाँव भर उमर पेरिद्ध निवागियों का माने न दिया—वह मूक बबाला रहा और 'काआई, काआई' जब तक पुकारता रहा जब गाँव कि उमक प्राण पमक न उठ सके। प्राण काल वह मेरे ही भीन्से मूक प्राण गया—और अचानक फिर पच्छा धीर ध्वनि में 'टन, टन' बोड उठ, उमक बाद वही परिगन्तु न न हो कराह।

ने कुछ धमक पू बेरी जनीता करती रही कि वह अब और कुछ बोल सकेगा—पर वह जाल का मूक था और मने देखा, प्राणी में सुबोड हो रहा था।

१८—१९—२०—२१—२२—२३—२४—२५—२६—२७—२८—२९—३०—३१—३२—३३—३४—३५—३६—३७—३८—३९—४०—४१—४२—४३—४४—४५—४६—४७—४८—४९—५०—५१—५२—५३—५४—५५—५६—५७—५८—५९—६०—६१—६२—६३—६४—६५—६६—६७—६८—६९—७०—७१—७२—७३—७४—७५—७६—७७—७८—७९—८०—८१—८२—८३—८४—८५—८६—८७—८८—८९—९०—९१—९२—९३—९४—९५—९६—९७—९८—९९—१००—





निर्जन बेला में उस चिर परिचित मार्ग पर किमी को देख कर उसे चौंका हुआ। क्षण भर में वह वहाँ जा पहुँची, किन्तु दोनों में से किसी ने उस नहीं देखा। उसने मुना पथिक यह रहे थे—‘मारिपुत्र मुत्तबर हैं, उन्हें मृत्यु-दण्ड मिलेगा।’ वे जा रहे थे उसी जोर, उन्हें बन्दी करने। बालिका अधिक न रफ़ सकी। उस घ्वनि ने उसकी सम्पूर्ण चेतना नष्ट कर दी। उसे प्रतीत हुआ मानो हिमकिरीट धारण किए हुए विश्व सम्राट् भी मारिपुत्र की मृत्यु घोषणा कर रहे हो। उसके मुख का स्वाभाविक उल्लान न जाने कहाँ किल्लीन हो गया, उमना शरीर अवसन्न हो चला और जाने बढ़ने की शक्ति उसमें न रही। उसे प्रतीत हुआ मानो मेरा सम्पूर्ण शरीर निर्जीव हो गया है।

‘मानव सेवा का द्रव्य धारण करने वाले मारिपुत्र मुत्तबर हैं।’ यह एक कर यह भावना उसके मस्तिष्क को मथने लगी। तब क्या यह मुख झोंप है, धर्म के आवरण में क्या वे राजनीतिक चाल चल रहे हैं। किन्तु उमना हृदय इसे स्वीकार नहीं कर सका। मारिपुत्र पर उसे धडा भी और विम्बान था कि उभागत के वे भवत अमत्य बाणी नहीं कहेंगे। तब क्या होगा? वह भयभीत हो उठी। समीप ही ब्रह्मपुत्र नद हर-हर करता हुआ रेत हिमाच्छादित पट्टानों पर प्रबल वेग से आगे बढ़ रहा था। डाका का ध्यान उन पर था। उसे आज सम्पूर्ण प्रकृति निर्जीव और मून्व प्रतीत हो रही थी। भविष्य में होने वाली सम्पूर्ण घटना उसे नेत्रों के सम्मुख स्पष्ट दिखायी दे रही थी। वह देख रही थी जल्लाहों के बीच धिरे हुए मारिपुत्र, तथा अपने पिता को। उसका शरीर मिहर उठा।

उमना मनी हुए पर जान हुए पथिका का अस्पष्ट वाणी—‘स्वयं-राज्य भा उनका -’ नरा कर मथन। बालिका का मुख होसी हुई चलना लोट गया। उन वेग न मथा। उसे अमर आत्मा का वह अस्मान। न मथनी मारिपुत्र। न मथनी मारिपुत्र। उसने बुद्ध स्वर में







की बाणी में क्षोभ था। अत्यन्त कष्ट से उन्होंने कहा—‘मैं मृत्यु से नहीं डरता किन्तु तुम दोनों की विपत्ति में डालकर मेरी आत्मा अत्यधिक कष्ट में प्रयाण करेगी।’

‘किन्तु मैं आपको बचाऊँगी।’ तथागत नेरी सहायता करते।

‘यह नहीं हो सकता बहन, किन्तु तुम्हें शब्दों की घोर आपत्ति में डालकर अपने जीवन की रक्षा में नहीं करना चाहता।’

‘शुचि तर्क करने का समय नहीं। राज-प्रतिनिधि के सैनिक आते ही होंगे। चलिये, शीघ्र पिता की सूचना देकर गुप्त पहाड़ी मार्गों में से आरक्षण तिब्बत के बाहर पहुँचा दी।’—शीघ्रता करने हुए डावा ने कहा।

सारिपुत्र उमी प्रकार निश्चल बंटे रहे।

‘चलिये। इस भीषण बेला में गुप्त मार्ग पूर्णतया सुरक्षित होंगे।’

‘पिता और बहन को लेकर मुझे जीवित रहने की इच्छा नहीं।’

‘नहीं, आपको चलना ही होगा—डावा की बाणी में दृढ़ता थी।’

‘हट न करो बहन। मुझे यही रहने दो।’

‘मेरे इन अन्तिम अनुरोध की उपेक्षा मत कीजिये, सारिपुत्र, शीघ्र चलिये।’

भावी आपत्ति की सूचना देना आवश्यक जान सारिपुत्र डावा के साथ सामा शब्दों के समीप चल पड़े।

मेघाच्छन्न पथ अन्धकार की काली चादर में ढका जा रहा था। रात्रि की लज्जता बढ़ती जा रही थी। शिवापुत्र का भीषण रव हृदय को कणित कर रहा था। उस अर्थ निशा में दुर्गम पथों को पार कर दोनों शब्दों के समीप जा पहुँचे।

शब्दों की शक्ति पूर्वक सम्पूर्ण घटना मूलकर विचारमग्न हो गये। कुछ क्षण पश्चात् उन्होंने डावा की ओर मुख फेरा और उसे सारिपुत्र की गुप्त मार्ग न तिब्बत के बाहर पहुँचा देने का आदेश देकर उठ खड़े हुए। सारिपुत्र ने



वही धूमिल सन्ध्या थी—मलिन और उदास ।

एकाएक डावा रुक गयी ।

‘अब मुझे विदा दो सारिपुत्र ।’—मञ्जु नेत्रों ने डावा ने कहा ।

‘डावा ..’ सारिपुत्र का कंठ अबरुद्ध हो गया । वे आगे नहीं कह सके ।

‘अब हम लोग तिब्बत की सीमा के बाहर हैं, यहाँ से आप निश्चिन्त भारत पहुँच सकते हैं ।’—किमी प्रकार डावा ने वाक्य समाप्त किया ।

‘न जाने किन बुरे क्षणों में मैंने तिब्बत में प्रवेश किया कि मेरे ही काम देवनुत्य शब्दग और तुम. ’ सारिपुत्र का वाक्य उसके अधुओं ने पूर्ण कर दिया ।

‘सारिपुत्र ! इस घटना ने अपने हृदय का इन्ध मन कोजिये । कष्ट ही मनुष्य की कमीटी है ।’

दोनों मौन थे ।

कुछ क्षण परवान् सारिपुत्र ने कहा—‘डावा ! तुम्हारा स्नेह इसी प्रकार सदैव मुझे पथ प्रदर्शित करता रहेगा ।’

कंठ तक आकर डावा की वाणी रुक गयी ।

‘अब विदा दो ।’ कष्ट पूर्ण स्वरो में सारिपुत्र ने कहा । उसके नेत्र सन्न हो गये । अधु सर्पा से वह धूमिल सन्ध्या और भी धूमिल हो उठी । उसी क्षीण आलोक में डावा न तपामत के उस पुत्रारी को विदा दी । झहरी पगडण्डियों पर जब तक सारिपुत्र दिखलायी पड़ते थे वह उसी ओर देखती रही । अन्न में वह अस्पष्ट छाया भी सर्वदा के लिए विलीन हो गयी । डावा ने एक दीर्घ निश्वास ली और लौट पड़ी ।

×

×

×

×

पूर्व परिचित ध्वनि सुन कर उमन मूव उठाया । स्वर्णनिरि को उपत्यका में स्थित वही नैनवोरी जोनका मन्दिर था । निज की भाँति उसके घण्टे का रव था । सब कुछ ज्यों का था या किन्तु था शन्य और उदास ।





भिष्णुक की बातें सुन उपस्थित लोगों ने उसे कुछ हल पर, कुछ मोल रह गए और धीरे-धीरे सभी नंगों से कचहरो की ओर देखने लगे। चांदनी चौक के—जिसे आजकल गुदड़ी बाजार कहते हैं—दक्षिणी दरवाजे के ठीक ऊपर उन दिनों कचहरी थी। न जनता में से उगकी ओर कोई बग़ और न कचहरो से ही किसी ने भागा। यह देव भिष्णुक के अग्रो पर उस भुवन मोहन मुस्कान की रेखा खिच गई जो यदि पुराण के मुंह लगती है तो उसे देवता बना देती है और जब नारी के अग्र पर सेजनी है तब नारी कुलटा कहलाने लगती है। समस्त जनसमूह पर उसी मुस्कान की मोहनी डालते हुए उमने वहाँ अच्छा अब चलना है। कोतवाली जाकर तनिक कोतवाल का भी होमला देव लूं।”

[ दो ]

पीप की संध्या सिहरने लगी थी। दाल-मटो में अमीर जान तवानक की दिव्य हवेली के दूसरे सण्ड वाले कमरे में तबला ठनकने लगा था। दीवारों पर टंगे शीशे में दीपाधारों में मोमचतियों के गूल सिल चुके थे। खिड़कियों के छज्जों में फूलों के गजरे लटकाने जा चुके थे। टेका, सारंगी और मजीरे की सहायता से अमीरजान पीपू पर 'रियाज़' कर रही थी—  
‘पपीहा रे, पी की बोली न बोल।’

अमीरजान 'स्थायी' समाप्त कर 'अंतरा' पर आ ही रही थी कि उसी गली में हलचल की आहट लगी। उसने देखा कि सामने की खिड़कियों में बंदयाओ का समूह बाहर गला निकाले गली में उल्लुकावस्त कुछ देल रहा है। अमीरजान भी उठ कर खिड़की पर आयी। उसने देखा कि बूड़े अपाहिजों और भिखारियों को रुपय पैस लूटाना मस्त मथर गति से गली में भण्ड भिष्णुक चला जा रहा है। उमक पीछ पीछ जादमियों की बड़ी भीड़ है। नगर की प्रसिद्ध मन्दरी बीरगनाथ अपन अपन भरोखों पर इठो हे परन्तु भिष्णुक की शक्ति अमीरजान चक्कर गगन में ही अस्त है, उने ऊपर



निद्रुक की बात सुन उपस्थित लोगों में कोई हँस पार, कुछ लोग  
 हँस पार और बाग़ खोजने नगी छ कन्दगी की बात बयाने लगे। बोलने  
 बाकू क नीयत जानकूत गुरती बाकार कहा है--बहिगी बयाने क  
 न कूत अतः एतः कन्दगी ची। न जनता में में जयकी और कोइ बर  
 चीर न कन्दगी म हू किगो न नीयत। एतः बग निद्रुक क अंग पर  
 एतः बुरी नाहूत भूकल क रोगा त्वक गरी की परिगुण के सुंदर गण  
 के गी एतः कतः एतः एतः है चीर अक नारी के अंग पर अंगी है  
 एतः नाग सु सुतः कन्दगी मगः है। गमयत अनगनुद् गदः एतः सुभाक  
 कः नः एतः कः एतः एतः कः नः एतः अक नः एतः है। कापः एतः  
 कः एतः कः एतः कः नः एतः एतः है।

[ ३४ ]

एतः की कः एतः एतः एतः। एतः मः अनीर जानः एतः  
 कः एतः एतः कः एतः एतः कः एतः एतः एतः एतः एतः  
 एतः एतः एतः एतः नः एतः एतः एतः एतः एतः एतः  
 एतः एतः कः एतः एतः कः एतः एतः कः एतः एतः  
 एतः एतः की एतः एतः एतः एतः एतः एतः एतः एतः  
 एतः एतः एतः कः एतः एतः

कः एतः कः एतः एतः एतः एतः एतः एतः एतः  
 कः एतः एतः कः एतः एतः एतः एतः एतः एतः एतः  
 कः एतः एतः कः एतः एतः एतः एतः एतः एतः एतः  
 कः एतः एतः कः एतः एतः एतः एतः एतः एतः एतः  
 कः एतः एतः कः एतः एतः एतः एतः एतः एतः एतः  
 कः एतः एतः कः एतः एतः एतः एतः एतः एतः एतः  
 कः एतः एतः कः एतः एतः एतः एतः एतः एतः एतः

खेने का अक्षर ही नहीं मिल रहा है। सांदर्य का यह अपमान उसे सहन न हुआ। वह स्वयं भी नगर की प्रतिष्ठा बेंसा थी। उनके रूप की तूनी बोलती थी। मुर ने उसे अक्षर की शक्ति दे रखी थी और तान ने उसे मान बना रखा था। इन्हीं दोनों के जल वह हृदयों पर आधिपत्य जमाना था और उनके सारे रस का शोषण कर अंत में उन्हें बरबाद कर देती।

औरों की तरह उत्तने भी निधुक को देखा, औरों ही की तरह वह भी उसके रूप पर मुग्ध हुई किन्तु यह देख कर वह औरों ने कहीं अधिक दुखी हुई कि असाफियों मोलयाली, उसकी सुत्वान का मोती, निधुक की नयन मंजरी में न गिर कर नदक की धूल में लोट रहा है। और औरों से बड़ कर अपने कान भी किया अर्थात् परमाने का शरदती शाल अपने शरीर से उतार उत्तने निधुक के ऊपर डाल दिया। निधुक ने शाल नीचे खींचने हुए चौक कर तिर ऊपर उठाया। अनोरखान से उसकी चार आँखें हुई। विषय गर्भ से भरी छुरी की धार जैसी ठोली नुत्कान अनोरखान के अधर पर सेल गयी किन्तु वह देर तक न बनी रह सकी। निधुक ने निराना साध कर अपने हाथ की हथपों पंता से भरी धंती ऊपर उठाती और वह पूरे जोर से अनोरखान की नाक के तिर पर तड़ाक से जा बंटी। उसकी नाक से रक्त टपकने लगा मानों किसी लडनन ने पुनः किसी गूँघनता का नासिका छेदन किया हो। निधुक उठा कर हंस पड़ा।

टोक उसी समन बगल की नासिका से एक बंदर्य, कुह्य और बूड़ी निखारिन बाहर निकली। वह संकड़ी पंजर लगा पंजाना पहने थी। उसका कुरजा तार तार हो रहा था और चादर के नाम पर उसके पान एक बोधडा मात्र था। उत्तने भी बेंसा निधुक बाण्ड देखा। उसके भुर्रियों से भः पोपलं मुंह न एक विचित्र ध्वनि निकली जिसे हँसी भी कह सकते हैं। तानों भी हाथ का लोडन पर शरीर का नासक भाग धकन वह उन कई अंत अपनो . . . अनोरखान में निधुक का बंदक तान दूर जाती— बाण

जाई बंटा, घाबाम । लोंगो को आसका हुई कि कुछ भिक्षुक कही वूदी का इकोल न दे विन्नु भिक्षुक ने दृष्टि और बाणी दोनों में कौनक भर कर कहा—'माई तू कही ! अच्छा आ ही गई तो कुछ खेती जा।' और उमने नीत में थरथर वूदी की काया पर अमीरजान की शाल डाल दी । वूदी बदन में हुआ तक न दे पायो थी कि भिक्षुक आगे बढ़ा ।

... जोर कोनवाली आ गई ।

भिक्षुक के पीछे चलने वालों की सस्या अब तक हवार के ऊपर पहुंच चुकी थी । सभी उत्सुक थे कि देखें, कोनवाली चल कर कंगी निरखती है । भिक्षुक के बल, और जोबट, शास्त्र फौजल और शास्त्र ज्ञान, कुन्ती की निपुणता और मगीत की माधता आदि का हाल बनारस का बच्चा बच्चा जानता था । साथ ही नये अंग्रेजो राज्य के कायदे कानूनों की हृदयहीन पापदी का स्वाद भी कानी की जनता को अल्प समय में ही मित्र चुका था । उस जनता का पूरा विश्वास था कि आज अद्भुत विराट् और 'अवमि देखिये देखन जोगू' जैसी कोई बात होकर ही रहेगी । स्वभाव में ही तमाशबीन कानी के नागरिकों की उत्कठा जाग मयी थी । परन्तु जब कोनवाली सामने आ गई तो कोरे तमाशबीन बनराने लगे, कायर छिनराने लगे ।

वर्तमान चौक जाने के सामने जहाँ आज समागियाँ खड़ी होती हैं, एक कुर्ची था और कुर्चे के चतुर्दिक मैदान । तत्कालीन कानी में गोलमण्डे, कचालू की एकमात्र दुकान नित्य शाम, उसी कुर्चे पर लगती । जाने के दक्षिण ठीक सामने मटक की पटरी पर कोनवाली थी । भिक्षुक ने कुर्चे की ऊंची जगह पर खड़े हो कोनवाली की ओर मुँह उठा कर आवाज लगायी—“हुजूर कानवाल साहब ! भिक्षुक ट्पारी पर आया है । क्या हुकुम होता है ।”

कोनवाली साहब अमनक नर नरा नार नो एक बरकन्दाज, जा



बैंधी आँखों से अश्रुमय उगीचउड़े हुए मद्मद् कम्प में पूछा था—'क्या गोरी की तपस्या जब नी पूरी नहीं हुई।' और तब वह उसे पहिचान कर पुन दूसरी रात आने का वचन दे बैठा। तभी से उसके मन में एक ही प्रश्न चक्कर काट रहा था कि क्या तप्यापी हुई वस्तु पुनः ब्रह्म की जा सकती है!

मंगलामोरी उसकी पत्नी थी। परन्तु उसने अपना मुन्य जीवन में दो ही बार देखा था। एक विवाह की रात और दूसरे तेरह वर्ष बाद पिछली रात। भिक्षुक ने अलवर के एक ऐसे चारण कुल में जन्म लिया था जिसकी जीविका का साधन कहरवा-भाउ न होकर अग्नि संचालन था। उसे जन्म में ही व्यायाम और राक्ष्य संचालन की शिक्षा मिली थी। तेरह वर्ष की वय में उसका विवाह जैसलमेर में हुआ। स्वयंसेवक राजस्थान के श्रमिद्ध चारण थे। कृष्णने ही राजाओं ने 'लाख पसाव'\* और 'कोड पसाव'\* से उनका सम्मान किया था। उत्तर वयन में उन्होंने नाथद्वारा जाकर कण्ठी बधवा ली थी। उसके बाद ही कन्या के रूप में उनके घर में प्रथम महान ने जन्म लिया। कन्या पिता के आँखों की पुतली हो गयी। जन-जाने ही पुत्री पर भी पिता का रस चढ़ने लगा। पिता पूजा करते और पुत्री मोविन्दलाल की प्रतिमा के समक्ष नाचती हुई तौनली बोलो में गायी—“मैं तो गिरिचर आगे नाचू रीं।”

भिक्षुक को विवाह की रात की वह घटना याद आयी जब सातपरी समाप्त होने पर ससुराल की स्त्रियों ने उसकी कविता और दोहा सुनाने के लिए कहा और वह मोन रह गया था। कारण तब तक उसे अपना

\*राजस्थानी नरेशों के यहाँ प्रथा थी कि वे किसी कवि या चारण का सम्मान करने के लिए हाथी, घोडा, भूमि, हथियार रत्न आदि मिला कर उसे ३० ४० हजार रुपये की रकम दिया करते थे। उस ही लाख पसाव और कोड पसाव कहते थे—मिश्रदत्त—रत्नप्रसाद काटि पसाव।





के चिनारे स्थित अपनी मर्ती नुमा खोह में प्रवेश किया। दीवट पर मृत्युदंड जल रहा था और भूमि पर बाघम्बर पड़ा था। उनी पर बैठ गाँजे की दम लगाने हुए वह विचार करने लगा।

अभी तक वह इस प्रश्न की सोचामा न कर पाया था कि जिसरा त्याग कर दिया उसका पुनर्ग्रहण उचित है या नहीं, विधि और नियम दोनों पहलू उसके सामने जाने थे। त्यागो हुई वस्तु उच्छिष्ट है। मारो उसे ग्रहण नहीं करते। नारी माधना पद का अन्तराय है, मैं मायक हूँ।

पुन दूसरे ही क्षण वह सोचता—‘गौरी मेरी महर्षिणी है। वह जैसी नुन्दरी है वैसी बुद्धिमती भी। उससे मुझे कर्तव्य पालन में सहायता ही मिलेगी। उसका मैंने पाणिग्रहण किया है। मैं उसे बचन दे जाया हूँ। वह मेरी प्रतीक्षा करती होगी।’ प्रश्न के इस सामाजिक पहलू ने निर्णय कर दिया। वह अभिभूत सा धीरे-धीरे खोह के बाहर निरला। एक नाव ओली। उन पर बैठ उसने उसे धारा में छोड़ दिया और स्वयं भी विचारधारा में वह चला। उसके हाथ शत्रुवन् नाव खेते रहे थे। वह सोच रहा था कि यदि वह न होती तो मिषाही मुझे जयस्य पकड़ लेते। मैं खादी हाथ बना मर्दि और पैदल था, वे हथियारबद, घोड़े पर मगार थे। न जाने कौने पहचान लिया दुष्टो ने। जलीनगर से बटेसर तक बाढ़ मारा। पर उन्हें भी पता चला गया होगा कि आज किमी से पाला पड़ा है। सब तो पीछे रह गये, परन्तु यह ससुरा हवलदार, उसने अत तक पीछा न छोड़ा।

नाव चिनारे लग गयी। भिक्षुक उन पर से उतरा। रेंती में खूटा गाड़ कर उसने नाव उसी में बांध दी और स्वयं गाँव की ओर चला। पीसी चादनी में शृगाल चद्रमा की ओर मुंह उठा उठाकर धोत्कार कर रहे थे। गाँव में पहुँचने ही कुत्ते उसके पीछे पीछे भूकने चले। मगलागौरी के आंगारे के सामने पहुँच भिक्षुक ने देखा कि आंगारे में काँठ की चौकी पर बैठा वही हवलदार मर्दो पर हाथ करना हुआ। बड़े स्वर से रामायण की ओपाइसी



'अच्छा !'—गौरी ने विष्णु का अनिनय करने हुए कहा ।

'अच्छा क्या ? नोचा या तुम्हें भी साथ लेती चलूँ । गिडकी के नीचे खड़ी होकर मिलना बिल्लापी । रोय तो तुम चार बजे मोर से ही उठकर क्या क्या गाया करती थीं । आज तुम्हारी जाहूट ही नहीं मिली । हाँ, यह गीत तो गाओ, जीजी, ' "म्हाने चाकर राखो जी, गिरषाणे लाला । " गेंदा ने बहा और यह खिलमिलाकर हँसी फिर तत्काल सपत होकर बोली—'अच्छा जीजी, ये मय गीत तुमने सीखे कहाँ ?'

आहूट गेंदा प्रश्न पर प्रश्न करती जा रही थी, बिना यह समझा किने, कि उसके प्रश्न गौरी के हृदय पर हथोड़े की चोट कर रहे हैं । फिर गौरी ने कहा—'इसमें बताने की क्या बात है ? मेरे चाप थी गोविंदगढ़ के उपासक थे न । उन्हों से यह सब सीखा है । उनके गोलोक धाम जाने पर अब श्यामो ने मेरी सब सम्पत्ति छीन ली तो मैं अपने मामा के पास चली आयी । मामा ने जब काशी राज की मेना में नौकरी की तो मैं भी यहाँ चली आयी ।'

'अच्छा एक गीत गाओ जीजी ! मुझे बड़ा अच्छा लगता है'—गेंदा ने कहा ।

'इस समय वित्त ठिकाने नहीं है, गेंदा ! फिर कभी गाऊंगी ।'

'नहीं, मेरी अच्छी जीजी ! दो ही एक कड़ी मुता दो —गेंदा ने बच्चों की तरह मचलते हुए कहा । अंत में गौरी को गेंदा के हठ के सामने झुकना पड़ा । उसने शन्य धारणा की और दस नुनमुनाला आरम्भ किया—

गरी में ना दरद-दिवारो

मरा दरद न जान काय ।

गरी ऊपर नज गिया की

हाल 'बोद' म 'ना जाय ।



100

... (faint, illegible text) ...



ऐसे बम्बू काटे बागों के बीच में होकर एक जड़वा और एक लड़की चौक की एक दूकान पर आ गिरे । उनके बागों और इनके दोनों सुपनों में जान पड़ता था कि दोनों निराश हैं । वह अपने मामा के बेस होने के निराश ही अपने भाया था और यह रमाई के निराश यश्वी । दूकानदार एक परदेसी ने सुन रहा था, जो मेरा भर लाले पातलों की गद्दी को गिने गिना हुआ न था ।

“तेरे घर कहीं है ?”

“नये में”—और तेरे ?”

“नाम्ने में”—वहीं कहीं रहती है ।”

“जगन्निह के बँडक में, वे मेरे मामा होने हैं ?”

“मे भी मामा के यहाँ जाया हूँ, उनका घर मुह बाजार में है ।”

इतने में दूकानदार निबटा और इनका मोटा देन लमा । मोटा लेकर दोनों मान-साप चले । कुछ दूर जा कर लड़के ने मुनकरा कर पुछा—  
“तेरी कुड़माई हो गई ?” इस पर लड़की कुछ आँखें चढ़ाकर —“न”  
फहकर दौड़ गई और लड़का मुँह देखता रह गया ।

दूसरे, तीसरे दिन सम्झौताने के यहाँ इधराले के यहाँ, अकस्मात दोनों मिल जाते । महीना भर यही हाल रहा था तीन बार लड़के ने फिर पुछा, “तेरी कुड़माई हो गई ?” और उनके बचाव में यही “न” निजा । एक दिन जब लड़के ने बेनी हो हूँनी में चढ़ाने के लिए पूछा तो लड़की लड़के की सभावना के विरुद्ध बोली—“हाँ हाँ गई ।”

कब ?

कल इतने यही सब समझ लेंगे । माता , लड़की भाग गई । लड़के ने बग का लड़का । मामने ने एक लड़के का माता ने इकेल दिना, एक आब-आब का दिन नों का रमा, खाद पर कुल पर परपर माता और एक मामनेवाले के नों नों नों नों । मामने रहा कर









## [ ३ ]

दो पहर रात नहीं है। जधेरा है। सपनादा छाया हुआ है। बोधमिह खाली त्रिमरुटो के नीचे टिनो पर अपने दोनों कमल बिछाकर और लहना-मिह के दो कमल और एक बरान कोट ओढ़कर सो रहा है। लहना-मिह पहले पर म्बदा टुआ है। एक आँसु नार्ई के मुखपर है और एक बोध-मिह के दुबके गरीर पर। बोधमिह कराहा।

“क्यों बोधमिह भाई, क्या है ?”

“पानी पि्ला दो।”

लहनामिह ने सटोरा उमके मुँह में लगाकर पूछा—“कहाँ कंमे हो ?” पानी पीकर बोधा बोधा—“कौपनी गूट रही है। रोम-रोम में तार दोड़ रह ह। दाँत खर रहे हैं।”

“अच्छा मेरी बरगी पहन जा।”

‘ओर तुम।’

‘मेरा नाम भिगदी है, ओर मुँके पानी लगनी है, पसीना जा रहा है।’

“ता में नहीं पहनना, पाए दिन मे तुम मेरे लिए—”

“मेरा नाम दुगरी गरम बरगी है। बाबू मन्धेरे ही आई है। बिदागत न मन बून-बूनकर भेज रही ह। मुँक उबहा बडा करे।” बा कट्टकर लहना-मिह कोट उनाए हर बरगी उनाएन लया।

‘मक कएन हा।’

और लहा लूट ‘बा कट्टकर नाही कएन बापा का उखने बरगदनी बरगा पहन हा और बरगा पहना हाए और रात का कुरता पर लहनामिह सट्ट हा। लहनामिह मक कट्टकर लहनामिह के दो कमल बिछाकर और लहनामिह के दो कमल और एक बरान कोट ओढ़कर सो रहा है। लहनामिह पहले पर म्बदा टुआ है। एक आँसु नार्ई के मुखपर है और एक बोधमिह के दुबके गरीर पर। बोधमिह कराहा।

‘मक कएन हा।’

‘ओर तुम।’



“बसो साहब, हम आज हिन्दुस्तान का जायेंगे।”

“लड़ाई तारम होने पर। बसों, क्या यह देय पसंद नहीं ?”

“नहीं साहब, शिकार के वे मंत्रे यहाँ कहीं ? याद है, पारसाय नकली लड़ाई के पीछे हम आज अणायरी के जिक्रे में शिकार करने गये थे—

“हाँ, हाँ”—“वही आज जब मोड़ पर सवार थे और आज का माननामा अबदुल्ला रास्ते के एक मंदिर में जलबझाने को रह गया था।” “देशक यहाँ कहीं का”— सामने से वह नील नाय निकली कि ऐसी बड़ी मने कभी न देखी थी। और आज की एक गोली कंधे में लगी और पेट में निकली। एसे अचानक के साथ शिकार खेदने में मरता है। क्या साहब, शिकार के तैयार हो कर उस नीलनाय का मिर आ गया था न ? आपने कहा था कि रोबामट की मेम में लगायेंगे। “हो, पर मने वह विलायत भेज दिया”—“एने बड़े-बड़े मोग। दो-दो फुट के तो हाये।”

“हाँ लहनासिंह, दो फुट चार इंच के थे। तुमने सिगरेट नहीं पिया ?”

“पीता हूँ साहब, दियानलाई ले जाता हूँ”—रहकर लहनासिंह सड़क पर धुल्ला। जब उने मदेह नहीं रहा था। उसने कटपट निरनय कर लिया कि क्या करना चाहिए ?

अंधेरे में किसी मनेवाने न वह टकराया।

“कौन बजीरासिंह ?”

“हाँ, बसों लहना ? क्या क्यामत आ गई ? जरा आँख समने दी होनी।”

[ ४ ]

“होश में आओ। क्यामत आई है और लपटन साहब की बसों पहनकर आई है।”

“यस ?”

“लपटन साहब या तो मारे गए हैं या कँड हो गए हैं। उनकी बसों पहनकर यह आई जमान जाया है। मचदार न इसका मुह नहीं देखा, मने









काह को लड़क लपट लिया । किमी का व्यवहार न हुई कि अज्ञानिह के दुमरा पाक-बाग बाह-जगा है ।

नडाई के समय चौद निकल आया था । एवा चौद बिग क प्रकार न सुन्दर-बागवा का दिया हुआ 'शायी' नाम गावक हुआ है । और हवा एवा न-न रहा वा जेमी की ज्ञानमद की भाषा में 'दलबीणोपदेशाभाय' कहवाती । बसार्गमिह नह रहा वा कि जेग मन-मन भर काम की एवि नर नुटा व निष्क रहा है पी अब में दोरा-बीरु सुवहार के पीछे एवा था । सुवहार अज्ञानिह न गारा हाक नून, और नागवान वाकर व उमरी पुन-वृद्धि का गगदु रहु व ओर कहु रहु व कि नून हाता पी आर मक धार बा ।

इस उदाह का आवाष ईन मीनर वाहिनी बाए की साई चाकी न नून आ थी । उहीन पाछ टलाकान कर दिया वा । वही व भट-नड वा बीमार टान का गार्दवी कवी, वा काई कहु चट के न-दर-न-दर ना गहुनी । पी-न-अलागक नबदाक वा । सुवहु हीने हाई वही गहुक जीवित । इमी ठके मानुनी गहु बीध कर रक बाही न राजक निष्ठाक मव बीर दुमरी में काजं ग-वी गरी । नकाल न इहनीमरु का बीध न गहु कीवता बाही । एन उमन गहु कहुकर टा व दिया कि बादा वाक दे मकर देना कागपता । बागीनरु अब में वही रहा वा । कहु नाही न टिगारा मवा । अज्ञान का छारकर सुवहार ननी ननी व इह टिक नाना न कदा-

ननु इति च कथमपि ननु मनु इति च कथमपि इति च इति

.....

.....

.....

.....

.....







उमने पूछा—जाज इतनी रात को सोने के बजाय रोते क्यों हो रामधन ? पर रामधन हिकिकियाँ मार-मार कर रो रहा था। कोई जवाब वह उस उमम कैसे देता ?

आगन्तुक ने फिर पूछा—आखिर बात क्या है रामधन कुछ तो बताओ।

रामधन ने तब अपना मारा दुःख-मुख उम दूकानदार से कह दिया। इसका फल यह हुआ कि दूसरे दिन से उम हलवाई की दूकान छोड़कर इस नये दूकानदार के यहाँ नौकरी मिल गई।

अब रामधन को पहचने की अपेक्षा कुछ आगम था। यह दूकान किसी एक चीज की नहीं, बल्कि बहुतेरी चीजों की थी। पेटेंट मायून, तेल, कपा, कंबी, थ्रश, टूथपेन्ट, बच्चों के तरह-तरह के बिलौने, छडियाँ, छाने, सोडा, चाय के प्लेट्स, कलम, दवात, स्पाही, लास्टेन, नीले के गिलाम, बूट की पालिश, फीने—नाम्यमें यह कि दैनिक व्यवहार में आनेवाली मकई बम्बुआ की वह दूकान थी। एक शब्द में कहूँ, तो कहना होगा कि उसके दूकानदार जनरल सर्वेष्ट थे। यहाँ रामधन को केवल जाध पेट भोजन नहीं, बल्कि मकद दस रुपये मिलने थे। खाने के लिए दूकानदार ने एक होटल में प्रबन्ध कर दिया था। बस जरूरत पर रामधन उस होटलवाले की भी कुछ सेवा कर देना और इस कारण वह उम रामधन से (पाँच रुपये) भोजन का लागत माग ही ले लेता था। दूकान पर उम मरेरे दस बजे से रात के दो बजे तक रहना पड़ता। अब वह मूनी हवा में ममि ले सकता था धूम सकता था, और अपनी भविष्य के सम्बन्ध में माधि सकता था। कभी-कभी होटल में जानवाल बाबजा से उम कुछ पैस आ नाम के रूप में मित्र जाने थे। और इस तरह बाबजा से उम मित्र बन कर बगल में बसा जाता था।

किन्तु रामधन का अब तक का यह व्यवहार नहीं था जिससे उम अपने पैसों का नाम धारण करने में सक्षम हो सके। इससे उम रामधन



पर पर अपना जो बचन बरबाद करने हो, क्यों न उनकी राशि-पाटशाखा में बिनाओ। अभी यह लगे तो बहुत अच्छा होगा।

बन, फिर क्या था, रामधन राशि-पाटशाखा में पहुँच गया।

इसी तरह दो माल और बीन गये। अब रामधन को वेतन में १२) मिलते थे। ७) महीने की बचन वह अब उससे बराबर कर ही रहा था। इन तरह कुल मिलाकर अब उसके पास लगभग पचास सौ रुपये हो गये थे जो नेत्रिग बैंक में उसी के नाम से जमा थे।

उन्ही दिनों जगत बाबू का एक मकान बन रहा था और उस मकान में उनका मरिा रुपया लग चुका था। जाड़े के दिन थे, माल करीब-करीब चुक गया था। और नया माल मँगाने के लिए अब उनके पास और रुपये नहीं रह गये थे। मोच विचार में बैठे बैठे वे इनने उदात्त थे कि चित्ताभाव उनकी मुँही ने स्पष्ट भल्लता था। दूकान बड़ाकर जब वे घर चलने लगे, तो रामधन ने पूछा—बाबू जी, अगर आप मुझे माफ़ कर दें, तो मैं एक बात पूछूँ? आप आज किसी बिना में डूबे हुए जान पड़ते हैं।

जगत बाबू—लेकिन तुम उस चिन्ता को दूर नहीं कर सकते।

रामधन—लेकिन बाबू, कुछ मालूम भी तो हो। मैंने आपका बहुत नमक खाया है। अगर किसी काम आ सकूँ, तो आप मुझे उसके मोके से दूर क्यों रखते हैं?

जगत बाबू—कुछ रुपये की जरूरत आ पड़ी है। दूकान में माल इस कदर कम है कि अगर एक हजार रुपये का और इन्तजाम न हुआ, तो दूकान उठा दनी पड़गी। उनक बाद क्या होगा यही सोचना है। चार्हुँ तो मकान के मायान पर कुछ मिक सकता है। पर यह बात है किनी बहज्जती की कि मकान पूरा बन भी न पाने और उस (अगरबी) खपन की नीबन आ आप! पर मैं ज़बर मुश्किल में ही हजार का होगा। बीबी मैं उसे उतरवाता हूँ या उस का क्षति भंग जाना है। क्या करूँ क्या न करूँ, कुछ सपने





जगनबाबू बोले—मेरी गृहिणी ने कल्प रात में कहा था रामधन का रूपया बहुत फलता है। इस साल बिना लान हुआ उनका कभी नहीं हुआ था। इसमें तो अच्छा है, दूकान में उसका एक आने का हिस्सा कर दिया जाय। सो इस साल को जो आमदनी हुई है, उसके तुम्हारे हिस्से की गुरुम दो सौ के लगनग होती है। पांच सौ तुम्हारी जो पूंजी है, वह इसमें जलग है। कुल मिलाकर ७०० ) होते हैं। ये रुपये या तो तुम मुझसे गन ले लो, या दूकान के हिस्से के रूप में जमा रखो।

मोहन इसी समय बोल उठा—उस दिन से रामधन जगन बाबू की दूकान में एक आने का हिस्सेदार हो गया।

चाचा—देकिन रामधन की उत्पत्ति का यह इतिहास तो अभी प्रारम्भ का ही है। इसके बाद जो उसका अगली विकास हुआ, उसकी कथा भी कम रोचक नहीं है। मृष्टि का यह चक्र बड़ा विचित्र है। किमी के उत्थान के साथ किमी का पतन मिथिन है, सलम है, कोई नहीं जानता। जगत बाबू एक दिन इस अमार सभार को छोड़कर चलते बने। और तब रह गये, उनके वे बच्चे, जो अभी पढ़ ही रहे थे। दुख-गुम तो जीवन के साथ लगे हैं। किन्तु काल-चक्र तो अपनी गति में चलता ही रहता है। जगत बाबू को मनुष्य की पहचान थी, वे रामधन की विकासशील प्रतिभा और ईमानदारी में परिचित थे। परन्तु उनके देहावसान के बाद, उनके बड़े लड़के, जो यूनिवर्सिटी में पढ़ रहे थे, रामधन में परिचित न थे। कुछ आचारा दोस्तों ने उनके वान भर दिये। और उसका फल यह हुआ कि रामधन को उसका हिस्सा देकर उन्होंने उसे दूकान में अलग कर दिया।

यह सब कुछ हुआ किन्तु रामधन के हृदय में कोई अन्नर नहीं जाना था। दूकान में अलग होकर उसने अलग दूकान तो कर ली, पर जगत बाबू के परिवार के प्रति उनकी धृष्टता का भाव अब भी कम नहीं हुआ था।



हो चुका, वह हो चुका। उमका उपयाम ना आदमी समय आने पर करेगा ही।

चाचा—एक दृष्टि में तुम्हारा यह कहना ठीक है। पर प्रायः हुआ यह है कि लोग अत्यधिक लाभ में होने वाली रकम को अपने निजी उपभोग में लाते हैं। किन्तु रामधन ने ऐसा नहीं किया। उन्होंने उस रकम को वस्तुओं का मूल्य घटने के सकट-काल के लिए सुरक्षित रखा।

मोहन—अच्छा फिर।

चाचा—उसकी दूरान इस बात के लिए भी प्रसिद्ध थी कि एक तो उनमें माल विनाश और नया मिलता है, दूसरे भाव-भाव करने की आवश्यकता नहीं पड़ती, नव वस्तुओं का दाप निश्चित है। कोई भी व्यक्ति, चाहे वह बच्चा ही हो, बला जाय, दामों में कोई अन्तर न होगा।

मोहन—अच्छा, माना कि एक विशेष कोष के संकथ में उनमें एक नया प्रयोग किया। लेकिन इसका परिणाम आखिर क्या हुआ ?

चाचा—परिणाम यह हुआ कि कुछ वर्षों के बाद जब वस्तुओं का मूल्य बराबर घटने लगा, तब उसके समान कुछ अन्य व्यवसायी तो पाटे में आकर समाप्त हो गये, किन्तु रामधन के व्यवसाय पर उसका कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा।

मोहन—अच्छा, ठीक है। किन्तु यह प्रयोग उसे सूझा किम तरह ?

चाचा—बान यह है कि रामधन अब इतना समर्थ हो गया था कि अर्थशास्त्र की बारीक बातों के मर्म को समझ सकता था। उसका अध्ययन बराबर जारी था। एक बार उसने किसी अर्थशास्त्री से बार्नालाय में प्रथम विक्रय के आदेश के संकथ में बढ़नेरी बात जान ली थी। अक्सर अने पर उसने उसकी प्रयोग किया और उस सफलता मिली। और इसी तरह ही रामधन उद्योग करने-करने आज दिन तक। ऊर्धी समित्त को पहुँच कर है।

नीहन—तो स्व-विक्रय का आरंभ आप दस मन्तवों के एक लम्बे  
 पंक्ति दिया था। तब कि विक्रय का परिमाण अर्थात् १० मन्तवों का  
 कुछ ही जाने पर लम्बे के एक अर्थ का विनाश करके रूप में मानव लम्बा  
 था, जो उस समय काम आये उस मन्तवों का मन्त्र बत रहा ही। अन्तु  
 सिद्ध और नई ही जाय और नबके लिए शर्म एक ही।

बाबा—ही इन मान रूप में जो रहते हैं।

बाबा-भतीखे से जाने करने हुए विम समय धूम कर लीं नहें थे उन  
 समय सन्धन भी उधर में आ निकले।

नीहन सोचने लगा—मनुष्य धूल भरा रोग है। कीन जानना था  
 कि एक अनाम बालक एक दिन इतना बड़ा आरंभों सब जायगा।

# कहानी-परिचय

## आत्माराम

श्री प्रेमचन्द जी की सर्वोत्तम कहानियों में आत्माराम एक है। बेटी धाम का रहनेवाला सुनार महादेव अपने लोहे को बहून चाहता है। और सबोत्तम लोहे को पकड़ने जाने की दौड़ में उसे असाधियों का हूज मिल जाता है। इस धन की प्राप्ति से उनका मन ही बदल जाता है और वह धर्म की ओर उन्मुख हो जाता है। उस धन से उसने पुण्य कार्य किये और आज भी बेटी में उसकी कीर्ति साईं जाती है।

प्रेमचन्द जी की कहानियों की भाषा कहानी के लिये सभी गुणों से युक्त है। सर्वमुत्तम होने के साथ उसमें जो एक बात सबसे विशेष है वह मुहावरों का प्रयोग है। हिन्दी साहित्य में इनके सुन्दर दम से मुहावरों का प्रयोग करने वाला अन्य कोई भी नहीं है। इनकी अनेक कहानियों के समान यह कहानी भी ग्रामीण वातावरण को लेकर है। चरित्र चित्रण की दृष्टि में भी प्रेमचन्द जी कहानी लेखकों में सबसे बढ़कर हैं।

महादेव का चित्रण बड़ा स्वाभाविक हुआ है। गाँव के सुनारों में आज भी अनेक ऐसे दिवंगे जिनमें महादेव के पूर्व जीवन से पूर्ण साम्य दिखेगा। वैसे अर्ध पिशाच आज भी गाँवों में हैं जिनका प्रातः नाम लेना अपराधुन समझा जाता है।

धन मिलने पर उसमें होने वाला परिवर्तन भी स्वाभाविक ही है।

रोचकता इस कहानी में बहुत है। आरम्भ करने पर समाप्ति के पूर्व छाह पाना संभव नहीं। मुहाविनेदार भाषा के साथ यह कहानी गाँवों के जीवन की एक झलकी भी प्रस्तुत करती है।



चन्द्रमण्ड का कटपुत्राली की तरह नाचन न देख मारने के और समय चन्द्रमण्ड डाँका मग्न के ।

मट्टमण्ड के लटके ही स्वार्थी नाचियों की बन आई । धन पानी की तरह बहाया जाने लगा । व्यापार की आर ने उदासीनता दिखलाई जान लगी । फलस्वरूप अब एक दिन एक दृष्टी के भुगपान की यात्रा आई ना जान हुआ कि लगाया नहीं है । बड़ी शीघ्र पूष हुई पर गर खरें । अन्न में मट्टमण्ड बूझाये गये । उन्होंने अपनी चतुराई में यह बला दूर कर दी । इनके पञ्चान अपने घर चले गये ।

अब चन्द्रमण्ड को मट्टमण्ड मूनीन का मुख्य ज्ञान हुआ । उन्होंने गुण प्रबन्ध किया कि वे लौट आये और अपने पुराने कार्य को संभालें । पर नीर हाथ न बाहर जा चुका था । मट्टमण्ड किसी प्रकार तैयार न हुए और चन्द्रमण्ड को हाथ मल्लकर रहना पड़ा ।

भाषा सर्वमूल्यम कर्मोपयन प्रणाली मन्दर, फलानी विजयानुर्ण तथा मनाग्रक है । किसी काम के करने में उन्दी न करनी चाहिये और बहुत नाच समझकर मूँट में बाण निवाल्नी चाहिये । या इन कामों का ध्यान नहीं करने उनकी बड़ी दसा होती है जो चन्द्रमण्ड को है ।

## शुक्लागन

श्री बन्दायन पाठ श्री पनां को यह करानी पुरान धाँकदा की ज्ञान का एक लोकी उपपन करनी है ।

गण्डव जर्ज का बसाई है । भाषा क हिनू कसाई का बरी पूजा की लच्छ व देखके ह । उन साईं ज्ञान दाी गण्डव मक नहीं पता । पर लोकी उपपन करने का लच्छ । पर 'उपपन' नाच के माये श्रद्ध कसाईमान को हन लच्छ को हन लच्छ के लच्छ । क लच्छव ना लच्छ पता । कसाई





करने वाली ने उसे एक ममा का मभापति ही बना डाला । ऐसे हाट के उलटुओं की पाल कभी न कभी खुलती ही है । पलटूगम की भी पाल खुली । भाषण लिखा हुआ पढ़ भरना उनकी सामर्थ्य के बाहर था । उन वह छुटाने गया । परन्तु मुद्रणालय की भूल ने 'भ' की जगह 'म' छप गया । और जब वही 'म' की जगह में 'म' थी पलटूगम जी मभापति ने पढ़ना प्रारम्भ किया तो हँसी के फीवाड़े बूटने प्रारम्भ हो गये । और मभापति जी को मूढ़ लटका कर नीचे उतरने पर बाध्य होना पड़ा ।

श्री कृष्णदेव प्रसाद जी गौड़ 'वेदव' शास्त्ररत्न के सफल लेखक हैं । उनकी इस कहानी में भी शास्त्र सर्वत्र वर्तमान है । शास्त्र रत्न की कहानियों का हिन्दी मातृमय में बड़ा अभाव है । वेदव जी का इस क्षेत्र में काय प्रगमनीय है ।

## परिवर्तन

श्री कुरुणापति जी त्रिपाठी द्वारा विवक्षित यह कहानी भारतीय मन्त्रुति व्यक्त करनेवाली है । प्राचीन भारत में स्वाभिमान की मात्रा अत्यधिक थी । शत्रु और जाल धनिक न होते थे । एक बार हार जाने पर पीढ़ी दर पीढ़ी बदले की भावना बनी रहती थी । और जब तक बदला चुका न लिया जाता वह शून्य के समान भाग बना रहता । इस कहानी में यह अतीत मशीव हा पडा है ।

भद्रदत्त जी उसका पुत्र राजाशा में राक्षसों में श्राव हुए शम्पति से शास्त्राथ करने ल और काश्मीर की विदुषी द्वारा सम्मोहित होकर उन्हें पार माननी पत्नी है । उर्मि व कारण भद्रदत्त को फामि लयाकर मरने के दिश ज्ञानः पत्नी है । पिता का मार्य का शरण जानने पर पुत्र बदली उस पर कटिचन्द्र ज्ञान है श्री काश्मीर उन जाना है । उसकी नश्वर्या सफल गाना है श्री कश्मीर का म नरु का मगल कारगरिक के श्राव म शक्ति के

निम्न आसता है। जिन् वदने के लिए उनमें इतना प्रयत्न किया नहीं गया कि वही जो प्रयत्न हमें का प्रयत्न आया तो एक नई बात हो गई। हृदय प्रकाश में पुत्र तथा में अन्तर्गत होने पर उन नारी ने अपने हृदय को हे दुकाने जो कार्यालय के चरणों में एक दिया। इसी में इत्य हृदय को उस नारी के आत्मनमनन में संलग्न बन दिया और कार्यालय बस्ते को हृदय में लगाकर स्नेहपूर्ण नेत्रों से देखने लगा।

कहानी में रोचकता है विज्ञाना संबंध पर्यन्त है। भाषा संस्कृतनिष्ठ और कोमल है।

## शु!शु!

नाटकीय शैली में लिखी हुई यह कहानी अपना एक विशेष स्थान रखती है। वर्तन शैली बड़ी प्रभावशाली है। 'शु!शु!' शीतो भाषा में बूने को बहने है। नान में और कहानी में जो मरक है वह अन्य एक शब्द नहीं होता और इसी कारण पाठक के मन में विज्ञाना बनो रहती है।

बुर्जाज ने चीन के महाराष्ट्र बंगाली द्वारा पेरिय नगर के विज्ञान पर्यटकों के निर्माण का उद्देश्य लिया। परन्तु एक बार शान्ति पर यह हृदय तथा और उसे गजाता हुई कि यदि हमने बार बार और न उतार तो उसे सुन्दर बनाने। इस मन्त्रालय में प्रयत्न उसे विभिन्न बनाना उसने अधिक प्रयत्न उनको प्राप्त किया। वह एक बार एक शब्द हुआ कि यदि मैंने उ

भाषा मरत्य तथा कहानी के घोष्य हैं। वपन के प्रभावशास्त्री इन ने कहानी को मञ्जीव बना दिया है।

## डावा

सुधी उमा डुमारो द्वारा लिखित यह कहानी वर्तमानक शैली की है। डावा विश्वनी लामा शब्दों की एकमात्र कन्या है। तथागत की पुत्रा के परवान् उद्यम पर जब उसे ज्ञात होता है कि मुप्तचर होने का अपराध नष्टकर सारिपुत्र का मृत्यु दण्ड दिया जाने को है तो उनकी जीवन रक्षा के लिए वह बल पड़ती है। मार्ग के अनेक विघ्न बाधाओं को लांघना हुई बड़ सारिपुत्र के पास पहुँचनी और उन्हें हटाने का उपयम करती है। सारिपुत्र पढ़ते तो इस पर नयार नहीं होने पर अन्त में मान जाते हैं और वह स्थान छाड़ देते हैं। मुप्तचर को भागने में सहायता देने के अपराध में पिता पुत्री दण्ड के भागी होने हैं।

कहानी में भाषा की सरलता तथा भाग प्रासादिकता है। सारिपुत्र की प्रोक्षणरथा के लिए डावा का त्याग प्रसन्नोप है।

## मूली ऊपर सेत्र पिया की

मूली ऊपर सेत्र पिया का थी रड जी की मञ्जीव रचना है। कामों के अनीन वैभव की मायाय कानी के वृद्धों के मुख से आज भी सुनी जाती है। उन्हीं में से यह भी एक है। परन्तु रड जी की कथन प्रणाली ने अनीन की प्रोक्षण म ला लडा किया है। पाठक पढ़ने समय मूल जाता है कि वह कृष्णी पड़ ग्या है। भिक्षुक का मुख-दुख उमका अपना हो जाता है। यह कहानी म मल्लोप ही पढ़ता है।

उस प्रदाने में त्रिम पण्डा कटा जाता था त्रिमम मन्कार परेमान वा भ्रात त्रिमकी परवान क त्रिम त्रिमिनोपिक की पालना हो चुकी थी





